

श्री सर्वसिद्धि, विजय पताका श्रुत स्कन्ध विधान

आशीर्वाद

गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव
वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव
आर्ष मार्ग संरक्षक, कवि हृदय, प्रज्ञायोगी दिगम्बर
जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव ससंघ

रचनाकार

जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव

प्रकाशक

श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन

C/o धर्मराजश्री तपोभूमि दिगम्बर जैन ट्रस्ट, धर्मतीर्थ
पोस्ट-कचनेर (गट नं. 11-12), जिला औरंगाबाद (महाराष्ट्र)

www.jainacharyaguptinandiji.org
E-mail : dharamrajshree@gmail.com

पुस्तक का नाम	: श्री सर्वसिद्धि, विजय पताका, श्रुत स्कन्ध विधान
आशीर्वाद	: गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्धुसागरजी गुरुदेव : वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव
रचनाकार	: दिगम्बर जैनाचार्यश्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव
सर्वाधिकार सुरक्षित	: रचनाकाराधीन
प्रकाशन वर्ष	: 2019
संस्करण	: प्रथम 1000
प्रकाशक	: श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन, औरंगाबाद (महाराष्ट्र) Email : dharamrajshree@gmail.com
प्राप्ति स्थान	1. प्रज्ञायोगी दिगम्बर जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव ससंघ 2. श्री धर्मतीर्थ, औरंगाबाद (महाराष्ट्र) 9421503332 3. श्री नितिन नखाते, नागपुर, 9422147288 4. श्री राजेश जैन (केबल वाले), नागपुर 9422816770 5. श्री रमणलाल साहू जी, औरंगाबाद मो. 9823182922 6. श्री सुबोध जैन, राधेपुरी, दिल्ली 9910582687
मुद्रक	: राजू ग्राफिक आर्ट, जयपुर 9829050791 Email : rajugraphicart@gmail.com



आशीर्वाद

वर्तमान धर्मात्माओं का विशेष पुण्य का उदय है जो उन्हें अच्छे ज्ञानी संतों का लाभ मिलता रहता है। साधु-संतों के द्वारा वीतराग वाणी का अच्छा प्रचार हो रहा है। वे चारों अनुयोगों का विशेष ज्ञान प्राप्त कर समाज में उसका धार्मिक प्रचार-प्रसार कर रहे हैं, यह एक अच्छी बात है। इसमें हमारे विद्वान शिष्य संयम और चारित्र की मूर्ति 'आचार्य गुप्तिनंदीजी' हैं जो स्व-कल्याणक के साथ-साथ धर्मात्माओं का भी कल्याण करते हैं, कुछ न कुछ लिखते ही रहते हैं। आपके द्वारा आगम सम्मत अनेक कृतियाँ प्रकट हो चुकी हैं, वर्तमान में आपके द्वारा 'सर्व सिद्धि, विजय पताका, श्रुत स्कन्ध विधान' रचाये गये हैं जो कि विशेष पुण्य प्राप्ति में कारण बनेंगे, इस विधान की आराधना करने से सर्वक्षेत्र में विजय की प्राप्ति होगी, यह विधान जीवों का बहुत ही हितकारी है, भक्तों की सर्वकार्य सिद्धि में कारण बनेगा। मेरा कहना है कि इस विधान की आराधना अवश्य करें, अवश्य कल्याण होगा। लेखक को मेरा आशीर्वाद, प्रकाशक को भी आशीर्वाद।

—ग.ग. कुंथुसागर
श्री क्षेत्र कुंथुगिरी (महा.)

शुभाशीर्वाद एवं शुभकामनायें

सत् साहित्य समाज के लिए दर्पण के समान है। समाज साहित्यरूपी दर्पण से स्वयं दर्शन करता है, सजाता है, संभालता है, परिष्कृत करता है। इसलिए कहा है “सर्वस्य लोचनं शास्त्रं यस्य नास्ति अन्ध एव सः”



अर्थात् शास्त्र सब के लोचन हैं और जो शास्त्र अध्ययन नहीं करते हैं वे चक्षुवाले होकर भी अन्धे हैं। ऐसे सत् साहित्य की रचना हमारे साधर्मि बन्धु आचार्य गुप्तिनन्दी भी करते हैं। प्रस्तुत नवीन कृति “सर्वसिद्धि, विजय पताका , श्रुत स्कन्ध विधान” इस शृंखला की नई कड़ी है। आचार्य गुप्तिनन्दीजी में कवित्व कला उत्तम होने से वे विशेषतः पद्यात्मक रचनायें करते हैं। यह पद्यात्मक विधा भारत की प्राचीन सुरुचिपूर्ण लालित्य कला है।

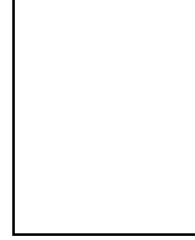
मेरी मंगल कामना यह है कि विश्व के प्रत्येक जीव सत्य-समता-साधनामय मार्ग से शाश्वतिक आत्मोत्थ अनन्त सुख को प्राप्त करें। इस कृति के प्रकाशक, सहायक, सदुपयोग करने वालों को मेरा शुभाशीर्वाद।

-आचार्य कनकनन्दी

“ इसे पढ़कर आगे बढ़ें ”

पाँचों परमेष्ठी प्रभो, उनका करके ध्यान।
सर्व विघ्न बाधा मिटे, निश्चय हो उत्थान॥

विश्व का महानतम अतिशयकारी मंत्र है—**णमोकार महामंत्र**। इस महामंत्र में पंच परमेष्ठी को नमन है। अर्थात् संसार की सबसे बड़ी आध्यात्मिक शक्तियाँ ये ही पाँचों परमेष्ठी भगवान हैं। इस महामंत्र की शक्ति से सम्पूर्ण जैन जगत भली-भाँति परिचित है।



जैनाचार्यों के अनुसार पंच परमेष्ठी के ध्यान से उनके पूजन-विधान से, मंत्र जाप से, सभी प्रकार की विघ्न-बाधाओं, संकट-पीड़ाओं, सर्व उपद्रवों का नाश होता है। सर्वत्र क्षेम, कुशल, मंगल, आरोग्य, धन-धान्य, स्त्री-पुत्र आदि सर्व सम्पदाओं की बिन माँगें ही प्राप्ति होती है। यह इसका भौतिक फल है। आध्यात्मिक फल के रूप में पाँचों परमेष्ठी का ध्यान-विधान पूजक को परम्परा से परम पद में स्थित करने वाला है। संसार के सब दुःखों से छुड़ाकर उत्तम सुख में पहुँचाने वाला है।

लघु विद्यानुवाद आदि मंत्र शास्त्रों के अनुसार अरिहन्त परमेष्ठी का ध्यान-विधान जाप करने से चन्द्र और शुक्र ग्रह का अरिष्ट निवारण होता है। सिद्ध परमेष्ठी की अर्चना से सूर्य व मंगल ग्रह का अरिष्ट परिहार होता है। आचार्य परमेष्ठी की उपासना से गुरु ग्रह अनुकूल बनता है। उपाध्याय परमेष्ठी की अर्चना से बुध ग्रह की सभी प्रतिकूलतायें शांत होती हैं। साधु परमेष्ठी की आराधना से शनि, राहू व केतु ये तीनों ग्रह स्वयमेव अनुकूल हो जाते हैं। विशेष कार्यों की शीघ्र सिद्धि हेतु हमें विशेष अभीष्ट ग्रह संबंधी विधि से आराधना करना चाहिए। पूजक को अरिहंत परमेष्ठी की श्वेत पुष्प, फल, नैवेद्य, ध्वजा आदि लेकर सफेद वस्त्रों में उपासना करना चाहिए। सिद्ध परमेष्ठी की अष्ट द्रव्यों के साथ लाल पुष्प, फल, नैवेद्य, ध्वजा आदि लेकर उपासना करना

चाहिए। आचार्य परमेष्ठी की अर्चना में पीले ध्वज, पुष्प, फल, नैवेद्य आदि अष्ट द्रव्यों से आराधना करना चाहिए।

उपाध्याय परमेष्ठी की उपासना हरे पुष्प, फल, नैवेद्य, ध्वजा आदि अष्ट द्रव्यों से करना चाहिए। साधु परमेष्ठी की आराधना में अष्ट द्रव्यों में नीले या काले पुष्प, फल, नैवेद्य, ध्वजा आदि का समावेश करना चाहिए। जैसे इन्द्र ध्वज विधान में प्रत्येक अर्घ ध्वजा व चैत्यालय साथ लेकर चढ़ाया जाता है उसी प्रकार यहाँ भी अरिहंत परमेष्ठी की अर्चना में 50 सफेद ध्वजायें सिद्ध परमेष्ठी के लिए 12 लाल ध्वजायें, आचार्य परमेष्ठी के लिए 40 पीली ध्वजायें, उपाध्याय परमेष्ठी के लिए 29 हरी ध्वजायें व साधु परमेष्ठी के लिए 32 नीली या काली ध्वजायें लेकर विशेष महा-अर्चना करके इसका विशेष फल प्राप्त किया जा सकता है।

विशेष द्रव्यों से हमारे भाव भी विशेष बन जाते हैं। भक्ति में विशेष मन लगता है। अतः उत्तम फल पाने के लिए उत्तम द्रव्य लेकर, उत्तम भावों से पूजा करें।

प्राचीन आचार्यों में भगवन् श्री कुन्दकुन्दाचार्य देव ने प्राकृत पंच गुरु भक्ति व पूज्यपादाचार्य गुरुदेव ने संस्कृत में पंचगुरु भक्ति लिखी है। श्री यशोनंदी आचार्य ने संस्कृत भाषा में पंच परमेष्ठी विधान लिखा है। रचना का इतिहास काल ज्ञात नहीं है।

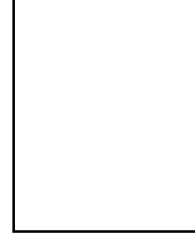
मैंने अपने ही लिखे 'रत्नत्रय विधान' से 'सर्व सिद्धि विधान (पंच परमेष्ठी विधान)' का संयोजन किया है। जिसका संपादन इन्दौर के सन् 2000 के वर्षायोग में स्वयं गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी ने किया था। एतदर्थ उन्हें समाधिरस्तु का आशीर्वाद है।

ग्रन्थ के प्रकाशन में गुप्तदान करने वाले दानी महानुभाव को विशेष आशीर्वाद। ग्रन्थ प्रकाशन के प्रेरक, प्रकाशक, मुद्रक व पूजक सभी को आशीर्वाद।

- आचार्य गुप्तिनंदी

कर्म विजय का विधान

काय-वाङ्-मन-कर्म-योगः काय-वचन और मन से कर्मों का आत्मा से सम्बन्ध होता है और कर्म बंध से बद्ध आत्मा संसार के चारों गतियों में अनेक दुःखों को भोगता हुआ भटकता है। इस भव भ्रमण से दुखी जीवात्मा को दुःख से मुक्त कराने के लिए गुप्तियों की आवश्यकता है। अशुभ मन-वचन-काय से दुख और शुभ मन-वचन-काय की प्रवृत्ति से सुख होता है। अनादि काल से मन-वचन-काय तीनों ही अशुद्ध है। उन्हें शुद्ध करने के लिए पूजा की आवश्यकता है।



पूजा शब्द में दो अक्षर हैं- 'पू' और 'जा'। 'पू' याने संस्कृत में पुञ्धातु है उसके अर्थ है पवित्रता तथा 'जा' का अर्थ है-उत्पन्न होने की क्रिया। अर्थात् पवित्रता उत्पन्न करने की क्रिया को पूजा कहते हैं।

वचन की पवित्रता के लिए स्कूल, कॉलेज, पाठशाला, व्याकरण शास्त्र इत्यादि हैं। शरीर की पवित्रता के लिए डॉक्टर, वैध, हकीम, दवाखाने इत्यादि हैं और मन की पवित्रता के लिए कोई पाठशाला, दवाखाने इत्यादि नहीं हैं। वह तो मात्र अरिहंत भगवान की पूजन से ही पवित्र हो सकता है। उसके लिए मन्दिर स्वाध्याय की आवश्यकता है। मन की पवित्रता से वचन और काया अपने आप में पवित्र हो जाते हैं; क्योंकि भगवत् गीता में भी श्रीकृष्ण ने भी कहा है कि '**मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः**' अर्थात् मनुष्य का मन ही बंध और मोक्ष के लिए कारण है। इसलिए मन की पवित्रता का होना ही अत्यन्त आवश्यक है और वह होती है जिनेन्द्र भगवान के पूजन से शत्रु पर विजय पाना आसान है। खेलकूद में विजय पाना आसान है। कोर्ट-कचहरी में विजय पाना भी आसान है, यह सब तो इसी भव की विजय के लक्षण है; परन्तु भव-भवांतरों में हम जिसके कारण हार गए हैं, दुःखी हैं जिसके जेल के कैदी बने हैं जिसके आधीन हैं। स्वतंत्रता से वंचित हैं, ऐसे महान् दुःखदायी कर्मों पर विजय प्राप्त करना अतिशय कष्टदायक है, दुर्लभ है।

ऐसे कष्टकारी दुःखों से सच्चे गुरु ही हमें बचा सकते हैं। आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी भी एक ऐसे ही महान् संत हैं जिनके वात्सल्य व सरल व्यक्तित्व से आज भक्त समुदाय लाभान्वित है, अब तक आचार्यश्री ने अपनी लेखनी से 'श्री रत्नत्रय विधान', 'श्री नवग्रह शांति विधान', 'श्री विद्या प्राप्ति विधान', 'लघु गणधर वलय विधान', 'सावधान (काव्य संग्रह)' आदि अनेक पूजन, विधान की कविताओं की रचनाएँ की हैं। इसी शृंखला में पूज्य आचार्यश्री जी ने अत्यन्त सरल, सहज शब्दों के द्वारा कर्मों पर विजय प्राप्त करना तथा तीन लोक के शिखर पर विजय पताका को फहराने का सरल उपाय रूप इस 'सर्वसिद्धि, विजय पताका, श्रुत स्कन्ध विधान' की जो रचना की है, वह अत्यन्त आदरणीय एवं महनीय है। आबाल, वृद्धों सभी के लिए सहज साध्य रूप हैं। ऐसे विधानों से ही अशुभ कर्मों की निर्जरा होती है, साथ ही पुण्याश्रव भी होता है।

पूज्य आचार्य श्री गुप्तिनन्दी जी गुरुदेव ने यह विधान रचकर अनन्त भव्य जीवों को पुण्य प्राप्ति का अनुपम साधन बताया है। इस विधान के द्वारा अनेक भव्य जीवों के पापों का नाश होवे तथा पुण्य का बंध होवे, यही शुभकामना है।

पूज्य आचार्यश्री जी के चरणों में पुनः-पुनः नमस्कार करते हुए यही शुभ भावना भाते हैं कि ऐसी शक्ति एवं बुद्धि हमें भी प्राप्त हो जिससे हम भी इन कर्मजाल को हटाकर कर्मविजेता बनकर विजय पताका फहराएं। इन्हीं शुभ कामना के साथ पुनश्चः श्री चरणों में नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु !

-मुनि महिमासागर

(शिष्य आचार्य श्री वरदत्तसागरजी)

क्यों लिखा यह विधान ?

संत समागम भाग्य से नहीं बड़े सौभाग्य से मिलता है।
गुरुजनों का सान्निध्य प्राप्त होने पर जीवन में परिवर्तन आता है एवं आत्मा में भक्ति व संस्कारों का अपूर्व संचार होता है।

किसी ने कहा है—

पद्मिनी राजहंसाश्च निर्ग्रन्थाश्च तपोधनाः।

त्रयेते यत्र विसर्पन्ति सुभिक्षः तत्र निश्चयः॥

पद्मिनी, राजहंस और निर्ग्रन्थ दिगम्बर तपस्वी जहाँ विचरण करते हैं वहाँ निश्चय से सुभिक्ष होता है।

वैसे तो आचार्यश्री अब तक 'श्री रत्नत्रय विधान', 'लघु गणधर वलय विधान', 'नवग्रह शांति विधान', 'पंचकल्याणक विधान', 'रोटतीज विधान', 'त्रिकाल चौबीसी विधान', 'विद्या प्राप्ति विधान एवं काव्य संग्रह-सावधान', 'चालीसा' आदि अनेक रचनाएँ कर चुके हैं। जिसमें से नवग्रह शांति विधान तो अत्यधिक चर्चित व प्रभावशाली विधान है। जो लगभग भारत के महाराष्ट्र, कर्नाटक, आसाम, गुजरात, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तरप्रदेश आदि अनेक प्रांतों के अनेक शहरों में बड़े विशाल स्तर पर सम्पन्न हो चुका है।

आचार्यश्री ने अपनी प्रज्ञा से आगम व सिद्धांतों के ज्ञान को काव्य कौशल के माध्यम से जन-जन के लिए उपयोगी बना दिया है। आपने पाँच पाप, पापों के कारण, उनसे छूटने के उपाय व पाप हटने पर प्राप्त होने वाली क्षायिक लब्धियों को बड़े ही सुन्दर ढंग से विभिन्न वार्षिक व मासिक छंदों में छंदोबद्ध किया है।

आचार्यश्री की इस अनूठी व जन-कल्याणकारी रचना से मन गद्गद है। अरहंत प्रभु व गणधर भगवंतों के साथ-साथ सरस्वती माता के चरणों में वंदन करते हुए यही प्रार्थना करता हूँ कि 'विजय पताका विधान' की कीर्ति दिगदिगंतर में फैले व आचार्यश्री शीघ्र ही कर्मों पर विजय प्राप्त करें।

हमें पूरा विश्वास है जो भी जीव श्रद्धा-भक्ति-विनयपूर्वक आगमोक्त विधि से इन विधानों को करेंगे वे निश्चित ही संसार सुखों के साथ-साथ परम्परा से शिव-सुख भी प्राप्त करेंगे।

गुरु चरणारविंद चंचरीक

मुनि सुयशगुप्त

श्रुतदेवी पुत्र – गुप्तिनंदीजी गुरुदेव



द्वादशांगं श्रुतस्कंधं, पूर्णज्ञानप्रदायकं ।
आप्ताननेन जन्यं च, श्रुतज्ञान नमाम्यहं ॥
श्रुतस्कंध-विधानं च, प्रणमामि भगदायकं ।
नमामि तस्य कर्तारं, गुप्तिनंदी मुनीश्वरं ॥

जो पूर्णज्ञान अर्थात् केवलज्ञान को प्रदान करने वाला है, ऐसे द्वादशांग को, श्रुतस्कंध को तथा आप्त (केवलज्ञानी) के मुख से उत्पन्न होने वाले श्रुतज्ञान को मैं नमस्कार करता हूँ तथा भग अर्थात् ज्ञान को देने वाले श्रुतस्कंध विधान को भी मैं नमस्कार करता हूँ तथा उस श्रुतस्कन्ध विधान के कर्ता (रचियता) आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव को भी मैं नमस्कार करता हूँ।

द्वादशांग की गंध है श्रुतस्कंध ।
केवलज्ञान का प्रबंध है श्रुतस्कंध ॥
आत्मपवित्रक ज्ञान की गंग हैं श्रुतस्कंध ।
मुनियों के संग-संग हैं श्रुतस्कंध ।
सम्यक् ज्ञान की तरंग है श्रुतस्कंध ।

तथा आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव की लेखनी का इक रंग है महाविधान के रूप में 'श्रुतस्कंध' ।

11 अंग तथा 14 पूर्व स्वरूप कल्पवृक्ष को जैन-संस्कृति में अनादिकालीन व्यवस्था से श्रुतस्कंध की उपमा से पूज्य माना जाता है। यही श्रुतस्कंध जिनवाणी, सरस्वती, शारदा, भारती, शास्त्र, वागीश्वरि आदि अनेकों रूप में पूज्य है। द्वादशांग में से 11 अंगों का ज्ञान मिथ्यादृष्टि जीव को भी हो जाता है; परन्तु सम्पूर्ण द्वादशांग का ज्ञान मात्र सम्यग्दृष्टि को ही हो सकता है और जिन मुनियों को सम्पूर्ण द्वादशांग का (द्रव्यात्मक

एवं भावात्मक) ज्ञान हो जाता है, उन्हें श्रुतकेवली कहा जाता है। इस श्रुतज्ञान का हमारे आचार्यों ने बड़ा ही विशेष महत्त्व बताया है।

“कोटि जन्म तप तपै ज्ञान बिन कर्म झरै जे।

ज्ञानी के छिनमाहिं त्रिगुप्ति तैं सहज टरे ते॥” (छहढाला)

अर्थात् बालतप आदि के द्वारा बिना ज्ञान के अज्ञानी जीव अर्थात् मिथ्यादृष्टि जीव के करोड़ों जन्मों में जितने कर्मों की निर्जरा होती है, उतने ही कर्मों की निर्जरा सम्यक्ज्ञान के द्वारा सम्यक्ज्ञानी जीव के क्षणमात्र में त्रिगुप्ति के द्वारा हो जाती है।

सम्यक्ज्ञान रत्नत्रय में मध्य-दीपक की तरह है, जो मध्य में रहकर सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र दोनों की ही विशुद्धि तथा वृद्धि में कार्यकारी है, परन्तु ज्ञान को सम्यक्ज्ञान करने में मात्र सम्यग्दर्शन सहकारी है।

सम्यक्ज्ञान अगर बाति हैं, तो सम्यग्दर्शन उस बाति को जलाने के लिए चिनगारी स्वरूप है तथा सम्यक्चारित्र उस सम्यक्ज्ञानी रूपी दीपक में घी का काम करके उसे कभी बुझने नहीं देता हैं तथा इन्हीं तीनों की एकता आत्मा में शाश्वत केवलज्ञान का दीप अनंतकाल के लिए प्रज्ज्वलित कर देती है।

यह सम्यक्ज्ञान एक खिवैया के समान है, जो संसाररूपी नदी में डूबते जीवों को सम्यग्दर्शन रूपी हस्त का अवलंबन देकर सम्यक्चारित्र रूपी नाव में बिठाकर संसार रूप नदी के उस पार अर्थात् मोक्ष में ले जाता है।

यह श्रुतज्ञान ही केवलज्ञान का बीज है तथा ऐसे ही द्वादशांग रूप विशाल श्रुतज्ञान की महा-अर्चना के रूप में ‘श्री श्रुतस्कंध विधान’ की रचना की है श्रुतदेवी के पुत्र ‘महाकवि आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव’ ने।

दिगम्बर जैन संस्कृति में द्वादशांग के प्रमुख दो उपमा रूप बताये हैं जिसमें से (1) श्रुतस्कंध और (2) सरस्वती है और द्वादशांग के इन दोनों

ही रूपों पर आचार्यश्री ने विधानों की रचना की है जिसमें से पहले 'सरस्वती विधान (विद्याप्राप्ति विधान)' और अब दूसरा प्रस्तुत 'श्री श्रुतस्कंध विधान'।

सरस्वती माता का वरदहस्त तो गुरुदेव पर सदा ही पूरी कृपादृष्टि बरसाता रहता ही है और ऐसे श्रुतदेवी के पुत्र अगर 'श्रुतस्कंध विधान' लिखे तो उसमें क्या आश्चर्य है ? अर्थात् कुछ भी आश्चर्य नहीं है। प्रस्तुत विधान को पढ़कर ऐसा लगता है जैसे मानो माता श्रुतदेवी ने ही अपनी महा-अर्चना के लिए ये विधान गुरुदेव से लिखवाया हो। 11 अंग व 14 पूर्व के अंतर्गत अंग बाह्य-अंग प्रविष्ट, पूर्वगत, चूलिका आदि रूप संपूर्ण श्रुतस्कंध का स्वरूप भक्ति-रस-छंद-अलंकार तथा सिद्धांत की तारतम्यता से गुरुदेव ने हमें इस विधान के माध्यम से समझाया है। जैसे ग्रंथों में सिद्धांत ग्रंथों को विशेष स्थान होता है, वैसे ही इस विधान में भी सिद्धांत का विशेष महत्त्व होने से यह विधान भी एक तरह से सिद्धांत-विधान हैं।

इन सर्वसिद्धि, विजय पताका, श्रुत स्कन्ध विधानरूपी माला में छंदों की डोर हैं, 11 अंग व 14 पूर्वरूपी पुष्प हैं। रस-अलंकार आदि उन पुष्पों के विभिन्न वर्ण हैं तथा भक्ति उनकी महक है। अतः ऐसा विधान समस्त भक्तों के अज्ञान के क्षय करने में कारण होगा। विशेषकर जो भी विद्यार्थी वर्ग, ज्ञानपिपासु उन्नति करना चाहते हैं, उनके लिए तो गुरुदेव ने इस विधान के रूप में चिंतामणि रत्न का प्रबंध किया है। इस विधान के फलस्वरूप आचार्यश्री श्रुतकेवली तथा केवली पद को प्राप्त करके संसार में श्रुतज्ञान का प्रसाद बाँटें तथा स्व-पर का श्रेय करें। इसी भावना के साथ गुरु चरणों में नमन करते हुए...

संघस्थ शिष्य - मुनि चंद्रगुप्त

सभी समस्याओं का समाधान

दोहा- तीर्थकर जिन को नमे, स्वर्गों के सुर दे देव।
क्योंकि जीते आपने, अष्ट कर्म स्वयमेव॥
गुप्तिनंदी गुरु ने लिखा, अतिशयवान विधान।
“विजय पताका” नाम है, करता सिद्धी प्रधान॥



हमारे आचार्यों ने श्रावक के मुख्य दो कर्तव्य बताये हैं-दान और पूजा। लेकिन हमेशा साधु-संतों का सान्निध्य श्रावकों को नहीं मिलता, कभी-कभी ही मिलता है। परन्तु भगवान हमें जिनालय में जब चाहे तब मिल जाते हैं। प्रभु के दर्शन, पूजन, पाठ, भक्ति आदि करने के ये आचार्यों ने अनेक मार्ग बताये हैं। जब भी किसी जीव पर भारी संकट आता है तो वह प्रभु के दरबार में अपनी फरियाद लेकर जाता है। भगवान तो मौन है परन्तु उनके जो लघुनंदन के रूप में मुनिराज हैं वो भक्ति करने का पूजा-पाठ का उपदेश देते हैं। आचार्यों ने कहा है- भगवान की भक्ति में इतनी शक्ति है कि वह भक्त के सभी कष्ट मिटाकर उसे भगवान बना सकती है। भक्ति एक अमृत है जो इसे पी लेता है। वो अजर-अमर हो जाता है। इतिहास उसका गौरव गाता है। पूज्यपाद आचार्य ने कहा है-

एकापि समर्थेयं, जिनभक्ति-दुर्गतिं निवारयितुम्।

पुण्यानि च पूरयितुं, दातुं मुक्ति श्रियं कृतिनः॥

जब-जब हमारे आचार्यों को वेदनीय कर्म ने आकर सताया तब-तब उन आचार्यों ने उपसर्ग परिषह को जीतने के लिये प्रभु की भक्ति कर स्वयं का कष्ट मिटाया है और भक्तों को मार्ग दिखाया है। सभी आचार्यों ने दुःख संकट के समय स्वाध्याय करने का उपदेश नहीं दिया है बल्कि हर एक आचार्य ने स्वाध्याय की अपेक्षा जिन भक्ति का ही मार्ग दिखाया है।

वही भक्ति का मार्ग दिखाने के लिये, कष्टों को मिटाने के लिये आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव ने अनेक विधान लिखे, इस पुस्तक में “सर्वसिद्धि, विजय पताका, श्रुत स्कन्ध विधान” का समावेश है।

इसके अलावा आचार्यश्रीके द्वारा और भी अनेक विधानों का सृजन हुआ है— ‘नवग्रह शांति विधान’, ‘रत्नत्रय विधान’, ‘पंचकल्याणक विधान’, ‘लघुगणधर वलय विधान’, ‘त्रिकाल चौबीसी विधान’, ‘विद्या प्राप्ति विधान’, ‘तीस चौबीसी विधान’, ‘सहस्रनाम विधान’, ‘भैरव पद्मावती विधान’, ‘मुनिसुव्रत विधान’, ‘पद्म-वासुपूज्य-नेमीनाथ विधान आदि। यह है पूज्य गुरुदेव भक्तों को सदैव धर्म में लगाने का मार्ग बताते हैं। आर्षमार्ग का दीप घर-घर में जलाते हैं। सब भक्तों के कष्ट मिटाते हैं। ऐसे गुरुवर के चरणों में आस्थाश्री का त्रयभक्ति पूर्वक आस्था, भक्ति एवं श्रद्धा विनय सहित नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु.....

– आर्यिका आस्थाश्री

पूजन की थाली में निम्नलिखित श्लोक बोलते हुए स्वस्तिक बनायें व अंक लिखें-

श्लोक- रयणत्तयं च वंदे चउवीस जिणे च सव्वदा वंदे।
पञ्च गुरुणां वंदे चारण-चरणं च सव्वदा वंदे॥

3

2 ५ 24

5

विनय पाठ

(दोहा)

कर्मजाल में हूँ फँसा, पाया है बहु त्रास।
जग स्वारथ से है भरा, किस पर हो विश्वास॥1॥
भक्ति-श्रद्धा-विनय सहित, आया जिनवर पास।
धन्य हुआ है भाग्य मम, मिट गई मन की प्यास॥2॥
प्रभुवर ने तो कर दिए, कर्म ये आठों नाश।
केवलज्ञान उदित हुआ, जग को दिया प्रकाश॥3॥
नमन करूँ जिनदेव को, करके निर्मल भाव।
खेवटिया जिन नाथ मम, पार लगा दो नाव॥4॥
भव्यजनों को तारते, भवसागर से आप।
शरण आपकी पा प्रभु, नश जाते सब पाप॥5॥
गुण अनंत हैं आपके, कर न सकें विस्तार।
अजर-अमर जिननाथ तुम, हो त्रिभुवन आधार॥6॥
अरिहंत-सिद्धाचार्य का, ले मंगल शुभ नाम।
उपाध्याय साधू-चरण, सफल करें सब काम॥7॥
जिनवाणी माता मुझे, देना सम्यक् ज्ञान।
कृपा करो जिस पर वही, बन जाता भगवान्॥8॥

पूजा आरंभ (हिन्दी)

ॐ जय-जय-जय - नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।
णमो अरिहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ॥

(ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः परिपुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

चत्तारि मंगलं, अरिहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो
धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहन्ता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पवज्जामि,
अरिहन्ते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि,
केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पवज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुरिपुष्पाञ्जलि क्षिपामि।

णमोकार मंत्र माहात्म्य

(नरेन्द्र छन्द)

पवित्र हो या अपवित्र, प्राणी चाहे भी हो कैसा।
बुरी अवस्था हो या अच्छी, या ना हो उसपे पैसा॥
णमोकार का ध्यान करे जो, वह पावन बन जाता है।
परमात्म का सुमरण ही, जीवन को शुद्ध बनाता है॥
महाभयानक विघ्नों से, यह महामंत्र छुड़वाता है।
जग जीवों को शांतिकारक, मुक्ति जो दिलवाता है॥1॥
सब पापों का क्षयकारक जो, सबमें पहला मंगल है।
विश्वशांति का महाविधायक, हरे अनिष्ट अमंगल है॥
अर्ह का उच्चारण करके, परम ब्रह्म को नमता हूँ।
सिद्धचक्र के बीजाक्षर को, नमस्कार नित करता हूँ॥2॥

कर्म अष्ट से मुक्त हुए जो, मुक्ति निकेतन के वासी।
सम्यक्त्वादि गुणों से भूषित, नमस्कार हो अविनाशी॥
जिनवर की पूजन करने से, प्रलय-विघ्न नश जाते हैं।
भूत शाकिनी सर्प शांत हो, विष-निर्विष हो जाते हैं॥३॥

(पुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे कल्याणमहंयजे ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाण पंचकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनइष्टमहंयजे ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाममहंयजे ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वस्ति वाचन

(नरेन्द्र छन्द)

अनंत चतुष्टय के तुम धारक, स्याद्वाद के हो दायक।
अंतर भौतिक लक्ष्मी शोभित, वंदनीय त्रिभुवन नायक॥
मूलसंघ के भव्य प्रवर को, पुण्य दिलाते हो बिन हेत।
करें जिनेश्वर की विधि पूजा, धन्य भाग्य मम भक्ति समेत॥१॥
तीन लोक में श्रेष्ठ व सुंदर, प्रभु की महिमा उदित हुई।
स्वतः प्रकाशमयी दृग्ज्योति, भव्यों के हित मुदित हुई॥

निर्मल ज्ञानामृत है प्रगटा, मंगल स्व-पर प्रकाशक हार।
तीन लोक में फैल गया वह, त्रिजग वस्तु का जाननहार ॥2॥
द्रव्यशुद्धि औ भावशुद्धि, दोनों विधि का आलम्बन ले।
करूँ यथार्थ पुरुष की पूजा, भाव सहित मैं द्रव्य लिए॥
सर्व वस्तु का ज्ञान कराते, अर्हत पुरुषोत्तम पावन।
उनकी केवलज्ञान अग्नि में, करें विसर्जित पुण्यार्जन ॥3॥

(ॐ ह्रीं विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

चौबीस तीर्थकर स्तुति

(यहाँ प्रत्येक भगवान के नाम के साथ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करें।)

(नरेन्द्र छन्द)

मंगल वृषभदेव जिनवर हैं, अजितदेव भी हैं मंगल।
मंगल संभव श्री जिनस्वामी, अभिनंदन करते मंगल॥
मंगल कर्ता सुमतिप्रभु हैं, पद्मप्रभु मंगलदायक।
श्री सुपार्श्व करते हैं मंगल, चंद्रप्रभु हैं सुखकारक ॥1॥
पुष्पदंत अमंगल हर्ता, शीतल शीतलता दाता।
श्री श्रेयांस सुमंगल भूषण, वासुपूज्य सब सुख दाता॥
विमल कष्ट हर मंगल करते, अनंतजिन सब सुख कर्ता।
धर्मप्रभु मंगल स्वरूप बन, शांतिप्रभु शांति कर्ता ॥2॥
कुंथुनाथ मंगलधर स्वामी, अरहनाथ अरि के हर्ता।
श्री मल्लि मंगल जिन स्वामी, मुनिसुव्रत मुनि के भर्ता॥
नमिजिनेश मंगल की मूरत, नेमिनाथ प्रभु हितकारी।
पार्श्वप्रभो उपसर्ग विजेता, वर्द्धमान मंगलकारी ॥3॥

(पुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

स्वस्ति मंगल विधान

(यहाँ प्रत्येक श्लोक के अंत में पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए।)

नित्य अचल क्षायिक ज्ञानधारी, विशुद्ध मनःपर्यय ज्ञानधारी ।
देशावधि आदि युत ऋषि मुनिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥1॥

महाकोष्ठ बीजबुद्धि पदानुसारि, संभिन्न संश्रोतृ स्वयं बुद्धिधारी ।
प्रत्येकबुद्ध-बोधिबुद्ध ऋषिवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥2॥

अभिन्नदशपूर्व-चतुर्दश पूर्वी, दिव्य मतिज्ञान महाबलधारी ।
अष्टांगनिमित्त ज्ञाता ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥3॥

स्पर्श-चक्षु-कर्ण-घ्राण-रसना, आदि प्रबल इन्द्रिय के धारी ।
महाशक्तिवन्त जिनमुनि-यति-ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥4॥

फल-तन्तु-नीर-जंघा-श्रेणी, पुष्प-बीज-अंकुर-रवि-अग्नि-गामी ।
नभ-जल-वायुचारण ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥5॥

अणु-महालघु-गुरुऋद्धिधारी, सकामरूपित्व-वशित्वधारी ।
वर्द्धमान बल के धारी गुरुवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥6॥

मन औ वचनबल-कायबल ऋद्धि, प्राकाम्य-अप्रतिघात गुणधारी ।
विक्रिया-क्रियाऋद्धि धारी गुरुवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥7॥

उग्रोग्रतप-दीप्त-तप-तप्ततपसी, अवस्थित-उग्रतप-महातपऋद्धि ।
तपो-लब्धि आदि से युक्त ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥8॥

आमर्ष-सर्वौषध ऋद्धिधारी, आषीर्विष-दृष्टिविष बल धारी ।
सखिल्ल-विडजल्ल-मल्लौषधियुक्त, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥9॥

क्षीरास्रवी-घृतस्रावी मुनीश्वर, अमृत-मधु-महारस के धारी ।
अक्षीणआलय-महानस आदि, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥10॥

इति परमर्षि स्वस्ति मंगल विधानं (9 बार णमोकार मंत्र का जाप करें)

श्री नित्यमह पूजा

रचयित्री : ग. आर्यिका राजश्री माताजी

शंभु छन्द (तर्ज- हे वीर तुम्हारे...)

अरिहंत, सिद्ध, सूरी, पाठक, साधु और जिनवर चौबीसों।
गणधर जिन पंच बालयतिवर, जिन आगम गुरु प्रभुवर बीसों॥
माँ जिनवाणी, निर्वाणभूमि, रत्नत्रय, दशलक्षण प्यारा।
नंदीश्वर पंचमेरु जिनवर, जिनचैत्य चैत्यालय मनहारा॥
जिनधर्म जिनागम बाहुबली, सोलहकारण पूजन करता।
इनका आह्वानन करके मैं, श्री मोक्ष महल का सुख वरता॥1॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

नरेन्द्र छन्द (तर्ज : माइन-माइन...)

धीर वीर गंभीर प्रभु की अर्चा मैं नित करता हूँ।
निर्मल जल की त्रय धारा दे जन्म-जरा-मृत हरता हूँ॥
देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थकर जिनवाणी गणधर पूजा।
त्रय चौबीसी रत्नत्रय नंदीश्वर दशलक्षण पूजा॥
सोलहकारण बाहुबली निर्वाणभूमि वा नवदेवा।
पंच परम परमेष्ठी पद की करते उत्तम सेवा॥1॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन चरण चढ़ाता शीतलता मुझको देना।

भव का बन्धन हरने वाले भव की ज्वाला हर लेना॥ देव शास्त्र..॥2॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल मनोहर अक्षत लाया अक्षयपद पाने हेतू।

अक्षयपद को देने वाली पूजन है सबका सेतू ॥ देव शास्त्र..॥3॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जल भूमिज बहु पुष्प चढ़ाऊँ श्रद्धा से जिन गुण गाऊँ ।
कामबाण को वश में करके मन ही मन मैं हर्षाऊँ ॥
देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थकर जिनवाणी गणधर पूजा ।
त्रय चौबीसी रत्नत्रय नंदीश्वर दशलक्षण पूजा ॥
सोलहकारण बाहुबली निर्वाणभूमि वा नवदेवा ।
पंच परम परमेष्ठी पद की करते उत्तम सेवा ॥4॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पुआ पकौडी रबड़ी घेवर आदिक व्यंजन मैं लाया ।
क्षुधावेदनी के भेदन को प्रभु सन्मुख दौड़ा आया ॥ देव शास्त्र..॥5॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जगमग दीपों की थाली ले आरती प्रभु की गाऊँगा ।
मोहकर्म का नाश मेरा हो सम्यक्भाव बनाऊँगा ॥ देव शास्त्र..॥6॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप धूपायन में खेकर मैं अष्टकर्म का हनन करूँ ।
प्रभु प्रतिमा के दर्शन करके निज स्वभाव का वरण करूँ ॥ देव शास्त्र..॥7॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताजे मीठे फल से अर्चा मनवांछित फल देती है ।
प्रभु की अर्चा मेरे जीवन के संकट हर लेती है ॥ देव शास्त्र..॥8॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

नीरादिक आठों द्रव्यों का सुन्दर थाल सजाया है ।
पद अनर्घ्य की अभिलाषा से भक्तिभाव जगाया है ॥ देव शास्त्र..॥9॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा : वीतराग भगवान की, पूजा सब सुख खान ।
त्रयधारा जल की करूँ, छोड़ूँ सब अभिमान ॥

शांतये शांतिधारा ।

दोहा- काम सृष्टि का नाश हो, पुष्पवृष्टि के साथ।
पुष्पाञ्जलि क्षेपण करूँ, पूर्ण विनय के साथ॥

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो नमः। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा : जयमाला की माल से, गूंजे जय-जयकार।
जयमाला हम पढ़ रहे, मिलकर सब नर-नार॥

शंभु छन्द (तर्ज : ये देश हैं वीर...)

श्री वीतराग सर्वज्ञ हितैषी अरिहंतों को नमन करूँ।
श्री सिद्ध सूरी पाठक साधु जिनचैत्य जिनालय नमन करूँ॥
सब द्वीपों के प्रभुवर न्यारे सीमंधर आदिक को ध्याऊँ।
श्री पंचमेरु अरु नंदीश्वर के चैत्यालय के गुण गाऊँ॥1॥
दशलक्षणधर्म हृदय धारूँ सोलहकारण भावन भाऊँ।
रत्नत्रय धारण करने के सम्यक् साधन को अपनाऊँ॥
चौदह सौ बावन गणधर जी सब ऋद्धि-सिद्धि देने वाले।
प्रभु के पाँचों कल्याणक भी सबका संकट हरने वाले॥2॥
जिनवर के सब जन्मस्थल को करता हूँ मैं शत-शत वंदन।
श्रावस्ती कौशाम्बी काशी अयोध्या चंद्रपुरी वंदन॥
काकंदी राजगृही मिथिला चंपापुर कुंडलपुर वंदन।
वैशाली सिंहपुरी कम्पिल हस्तिनापुर आदि वंदन॥3॥
अतिशय औ सिद्धक्षेत्र जी का सुमरण सब पाप तिमिर हरता।
मैं चंपा पावा ऊर्जयंत सम्मेदशिखर वंदन करता॥

पावा द्रोणा सोना तुंगी कैलाश चूलगिरी ध्याऊँगा ।
रेसंदी मुक्ता उदयरत्न कुंथलगिरी को मैं जाऊँगा॥4॥
विपुलाचल पोदनपुर मथुरा तारंगा गजपंथा वंदन ।
श्री सिद्धवरकूट कमलदहजी गुणावा शत्रुंजय वंदन॥
अहिक्षेत्र अणिंदा वृषभदेव जटवाडा पैठण चंवलेश्वर ।
कचनेर चाँदखेड़ी पाटन जिन्तूर तिजारा गोमटेश्वर॥5॥
कुन्थुगिरी नवग्रह धर्मतीर्थ मांडल के चन्दा को वंदन ।
श्री महावीरजी पदमपुरा आदिक तीर्थों को भी वंदन॥
जय ऊर्ध्व मध्य और अधोलोक के सब चैत्यालय मनहारी ।
निर्वाण सिधारे पूज्य पुरुष की पूजा सब संकटहारी॥6॥
श्री राम हनु सुग्रीव नील महानील कुम्भ शम्भु ज्ञानी ।
लवमदनांकुश सागर वरदत्त श्री बाहुबली स्वामी ध्यानी ।
गौतम जम्बू सुधर्मा श्री त्रय पांडवसुत अनिरुद्ध नमन ।
इस ढाईद्वीप से मोक्ष पधारे उन गुरुओं को है वंदन॥7॥
श्री पंचबालयति को ध्यायें नवदेवों की शरणा पायें ।
सातिशय पुण्य कमाने को मंगलमय पूजा हम गायें॥
जिनगुण के अनुरागी बनकर संसार भ्रमण का नाश करें ।
शिवपुर के राजतिलक हेतु यह 'राज' प्रभुगुण आश करें॥8॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा : श्री जिन के आशीष से, प्रगटाऊँ निज ज्ञान ।
पूजन-कीर्तन-भजन से 'राज' वरे शिव थान॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

श्री चौबीस तीर्थकर पूजा

(गीता छन्द)

वृषभादि से वीरान्त तक है सर्व जिन की अर्चना।
हरती हमारे पाप तम और क्लेश की सब वंचना॥
त्रय रत्न गुणधर तीर्थकर की पुष्प लेकर थापना।
प्रभु का परम सान्निध्य पा हम दुःख मिटायें आपना॥१॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकर समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकर समूह ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(अडिल्ल छन्द)

निर्मल जल हम कंचन झारी में भरें।
जिनवर के चरणों में त्रय धारा करें॥
जिन शासन का चक्र प्रवर्तन कर रहे।
चौबीसों जिनवर भव संकट हर रहे॥१॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्दन सम शीतल चन्दन अर्पण करें।

जिनवर की अर्चा भव का वर्तन हरे॥ जिन शासन...॥२॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनम् निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ता और अक्षत मुष्टि में भर लिये।

अक्षय सुखदाता को अर्पण कर दिये॥ जिन शासन...॥३॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

अम्बुज भूमिज मनहर सुरभित सुमन से।

मदनजयी को पूजे निज मन्मथ नशे॥ जिन शासन...॥४॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस मधुर प्रासुक व्यञ्जन से अर्चना ।
परम कृपालु हरें क्षुधा की वंचना ॥
जिन शासन का चक्र प्रवर्तन कर रहे ।
चौबीसों जिनवर भव संकट हर रहे ॥5॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

घृत कपूर दीपों से करते आरती ।
जिनवर वाणी केवल दीप उजालती ॥ जिन शासन... ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

हितकर मनहर धूप चढ़ाये नाथ को ।
कर्म विनाशन हेतु झुकाये माथ को ॥ जिन शासन... ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपम् निर्वपामीति स्वाहा ।

सरस मधुर केला आदि फल ला रहे ।
मुक्ति फल दाता के चरण चढ़ा रहे ॥ जिन शासन... ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल-फल आदि अर्घ बनायें भाव से ।
अनर्घ पद हित भक्ति रचायें चाव से ॥ जिन शासन... ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा : चौबिस जिन के चरण में, मिलती शांति अपार ।
शांतिधार देकर करें, पुष्पाञ्जलि सुखकार ॥

शांतये शांतिधारा... दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्...

जाप्य मन्त्र : ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः ।

(9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा : आदिनाथ से वीर तक चौबीसों भगवान ।
उनकी जयमाला पढ़ें होवें सिद्ध समान ॥

चौपाई

वृषभ धर्म वृषभेश बतायें, अजित कर्म अरि पर जय पायें।
संभव भव का भ्रमण छुड़ायें, अभिनंदन सुरवंद्य कहाये॥1॥
सुमति जिनेश सुमति के दाता, चित्त पद्म के पद्म विधाता।
श्री सुपार्श्व भव पाश हरेंगे, 'चन्द्र' चित्त में वास करेंगे॥2॥
पुष्पदंत को पुष्प चढ़ायें, शीतल अंतस्तल बस जायें।
श्री श्रेयांस श्रेय के दाता, वासुपूज्य वसु कर्म विधाता॥3॥
विमल कर्म मल दूर भगायें, जिन अनंत शक्ति प्रगटायें।
धर्मनाथ दशधर्म सिखायें, शांति जगत में शांती लायें॥4॥
कुंथु से कुंथवादिक रक्षा, अरहनाथ की श्रेष्ठ विवक्षा।
मल्लि कर्म मल्लों को जीते, मुनि सुव्रत व्रत अमृत पीते॥5॥
नमि को नमे सकल नर नारी, नेमि तजे राजुल सुकुमारी।
पारस के हम पार्श्व रहेंगे, वर्द्धमान को नमन करेंगे॥6॥
चौबीसों तीर्थेश हमारे, पंचकल्याणक जिनके न्यारे।
'गुप्तिनंदी' प्रभु के गुण गाये, तीन गुप्ति धर शिव सुख पाये॥7॥

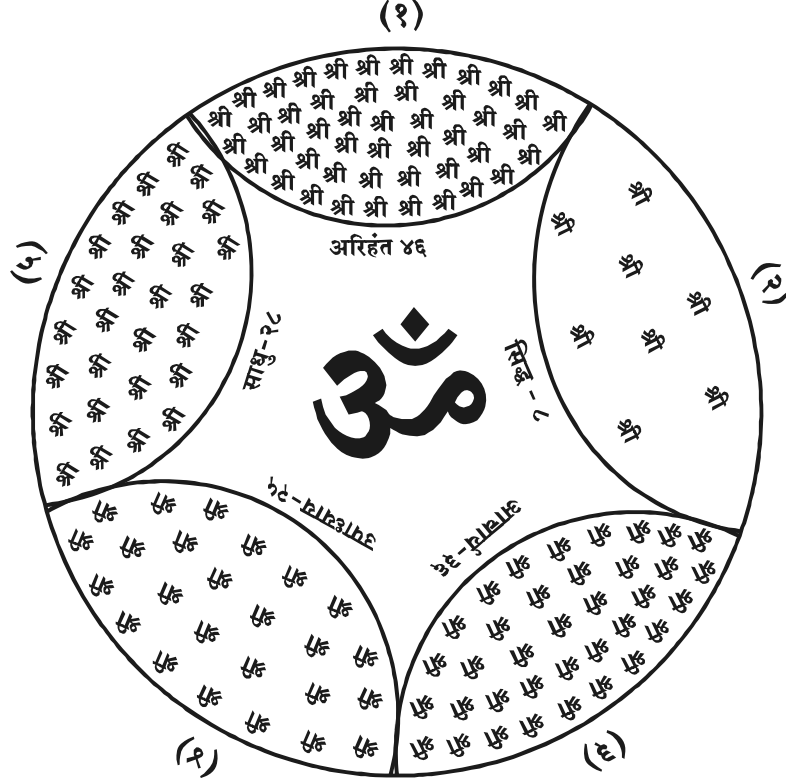
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरांत चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से, 'चौबीस जिन' पूजन करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो, सुर-नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' का व्रत पूर्ण कर, भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्री सर्व सिद्धी विधान का मांडला



मांडला के बीच में (१) पहले कोष्ठक में अरिहंत के ४६ अर्घ, (२) दूसरे कोष्ठक में सिद्ध के ८ अर्घ, (३) तीसरे कोष्ठक में आचार्य के ३६ अर्घ, (४) चौथे कोष्ठक में उपाध्याय के २५ अर्घ, (५) पाँचवें कोष्ठक में साधु के २८ अर्घ चढ़ायें।

इस प्रकार इस विधान में $46+8+36+25+28=143$ अर्घ होते हैं।

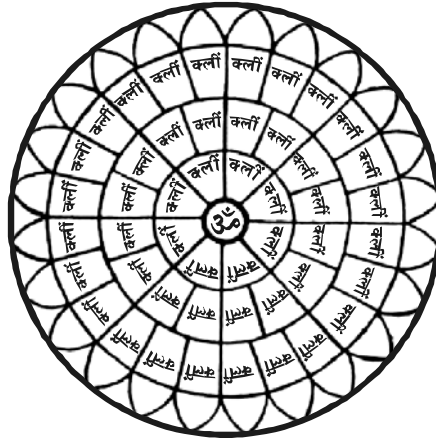
श्री विजयराज यंत्र

७१	६४	६६	८	१	६	५३	४६	५१
६६	६८	७०	३	५	७	४८	५०	५२
६७	७१	६५	४	६	२	४६	५४	४७
२६	१६	२४	४४	३७	४२	६२	५५	६०
२१	२३	२५	३६	४१	४३	५७	५६	६१
२२	२७	२०	४०	४५	३८	५८	६३	५६
३५	२८	३३	८०	७३	७८	१७	१०	१५
३०	३२	३४	७५	७७	७६	१२	१४	१६
३१	३६	२६	७३	८१	७४	१३	१८	११

विधि :- इस यंत्र को रवि पुष्प में भोजपत्र सोना या चाँदी के पत्रे पर खुदवा कर पूजन करने से कोर्ट, कचहरी, शत्रुजय आदि सर्वकार्य में जय-विजय लाभ होता है।

नोट- इस मंत्र को पढ़ते हुए पुष्प या धूप चढ़ायें।

विजय पताका विधान का मॉडल



मंडल में अड़तालीस अर्घ के 48 कोष्ठक हैं।

श्रुत स्कन्ध विधान माण्डला



ऋद्धि मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं नमो जिणाणं ॥1॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो उगगतवाणं ॥25॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो ओहि जिणाणं ॥2॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो दित्ततवाणं ॥26॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो परमोहि जिणाणं ॥3॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो तत्ततवाणं ॥27॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो सव्वोहि जिणाणं ॥4॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो महातवाणं ॥28॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो अणंतोहि जिणाणं ॥5॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो घोरतवाणं ॥29॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो कोट्टबुद्धीणं ॥6॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो घोरगुणाणं ॥30॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो बीज बुद्धीणं ॥7॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो घोरगुणपरक्कमाणं ॥31॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो पादाणुसारीणं ॥8॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो घोरगुणबंभयारीणं ॥32॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो संभिण्ण सोदारणं ॥9॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो आमोसहि पत्ताणं ॥33॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो सयंबुद्धीणं ॥10॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो खिल्लोसहि पत्ताणं ॥34॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो पत्तेय बुद्धीणं ॥11॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो जल्लोसहि पत्ताणं ॥35॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो बोहिय बुद्धीणं ॥12॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो विण्णोसहि पत्ताणं ॥36॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो ऋजुमदीणं ॥13॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो सव्वोसहि पत्ताणं ॥37॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो विउलमदीणं ॥14॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो मण बलीणं ॥38॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो दसपुव्वीणं ॥15॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो वचि बलीणं ॥39॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो चउदसपुव्वीणं ॥16॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो काय बलीणं ॥40॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो अट्ठांग महाणिमित्त कुसलाणं ॥17॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो खीर सवीणं ॥41॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो विउव्वइड्ढि पत्ताणं ॥18॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो सण्णि सवीणं ॥42॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो विज्जाहराणं ॥19॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो महर सवीणं ॥43॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो चारणाणं ॥20॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो अमिय सवीणं ॥44॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो पण्णसमणाणं ॥21॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो अक्खीण महाणसाणं ॥45॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो आगासगामिणं ॥22॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो वड्ढमाणाणं ॥46॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो आसीविसाणं ॥23॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो सिद्धायदणाणं ॥47॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो दिट्ठीविसाणं ॥24॥	ॐ ह्रीं अर्हं नमो सव्व साहूणं ॥48॥

पंच महागुरु भक्ति

-श्रीमद् कुन्दकुन्दाचार्य

मणुय-णाइंद-सुर-धरिय-छत्तया,
पंचकल्लाण-सोक्खावली-पत्तया ।
दंसणं णाण झाणं अणंतं बलं,
ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ॥1॥
जेहिं झाणग्गि-वाणेहिं अइ-दड्डयं,
जम्म-जर मरण-णयर-त्तयं दड्डयं ।
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं,
ते महं दिंतु सिद्धा वरं णाणयं ॥2॥
पंच-आचार-पंचग्गि-संसाहया,
बारसंगाइ-सुअ-जलहि-अवगाहया ।
मोक्ख-लच्छी महंती महंते सया,
सूरिणो दिंतु मोक्खं-गया-संगया ॥3॥
घोर-संसार-भीमाडवी-काणणे,
तिक्ख-वियराल-णह-पाव-पंचाणणे ।
णट्ठ-मग्गाण जीवाण पहदेसिया,
वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ॥4॥
उग्ग-तव-चरण-करणेहिं झीणं गया,
धम्म वर-झाण-सुक्केक्क-झाणं-गया ।
णिब्भरं तव-सिरी-ए-समा-लिंगया,
साहवो ते महा-मोक्ख-पह-मग्गया ॥5॥
एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए,
गुरुय-संसार-घण-वेल्लि सो छिंदए ।
लहइ सो सिद्ध-सोक्खाइ बहु-माणणं,
कुणइ कम्मिंधणं पुंज-पज्जालणं ॥6॥
अरुहा सिद्धा इरिया उवझाया साहु पंचपरमेद्धी ।
एदे पंच-णमोयारा भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥7॥

सर्व सिद्धी विधान (श्री पंच परमेष्ठी विधान)

श्री पंच परमेष्ठी पूजा

स्थापना (गीता छंद)

अर्हत सिद्धाचार्य पाठक साधु त्रय जग वंद्य हैं।
त्रय लोक के सब जीव से त्रयकाल जो अभिवंद्य हैं॥
वे पंच परमेष्ठी प्रभो मम आत्म में निश्चय बसे।
आह्वान करते पुष्प से यह चित्त प्रभु पद में बसे॥

ॐ ह्रीं श्री पंच परमेष्ठी समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-
तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अडिल्ल छंद)

मृण्मय व कंचन के मंगल कुंभ लें।
पाँचों गुरु पर मंगल जलधारा करें॥
पाँचों परमेष्ठी की करते अर्चना।
पंच परम पद पाने करते वन्दना॥1॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घिस-घिस चन्दन भव क्रन्दन का ताप हर।

प्रभु के पद में चर्चे पावन जाप कर॥ पाँचों...॥2॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ता अक्षत तन्दुल मुट्ठी में सजा।

पाँचों प्रभु को भेंट करें बाजे बजा॥ पाँचों...॥3॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पंचरंग के विविध पुष्प हम ला रहे।

पंच परम परमेष्ठी जिन को ध्या रहे॥ पाँचों...॥4॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

मीठे मनहर प्रासुक सब व्यंजन लिये ।
थाल अनेकों सजा शीघ्र अर्पण किये ॥
पाँचों परमेष्ठी की करते अर्चना ।
पंच परम पद पाने करते वन्दना ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नों के व घृत के जलते दीप से ।
करें आरती मोह तिमिर अपना नशे ॥ पाँचों... ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप चढ़ाकर महकायें दरबार को ।
नहीं सहेंगे अब कर्मों की मार को ॥ पाँचों... ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

आम सेव केला आदिक ले श्रेष्ठ फल ।
चढ़ा प्रभु को हम पायेंगे मोक्ष फल ॥ पाँचों... ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठों द्रव्य मिलाकर लाये अर्घ में ।
पाँचों पद पा पहुँचे हम अपवर्ग में ॥ पाँचों... ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- पाँचों प्रभु के पाद में करें सलिल की धार ।
करें भव्य सुमनावली पाने शिव उपहार ॥

शांतये शांतिधारा.....दिव्य पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

सोरठा- पंच परम पद जान, सर्व पदों में श्रेष्ठतम ।
पायें मोक्ष महान्, उनकी हम जयमाल पढ़ ॥

दोहा

छियालीस गुण के धनी, अर्हत् देव प्रधान।
पूजें उनको अर्घ ले, पाने केवलज्ञान॥1॥
अष्ट मूलगुण के धनी, सर्वसिद्ध जिनदेव।
सर्वकार्य सिद्धी करें, सिद्धी प्रदाता देव॥2॥
छत्तिस गुण को धारते, श्री आचार्य महान्।
शरणागत हर जीव का, करें सतत् उत्थान॥3॥
गुण जिनके पच्चीस हैं, उपाध्याय कहलाय।
ज्ञानदीप बन भव्य में, प्रज्ञा ज्योत जलाय॥4॥
आठ बीस गुण को धरें, सर्वसाधु मुनिराज।
शरणागत हर भव्य को, देते शिव साम्राज॥5॥
मंगल उत्तम शरण हैं, पंच परम पद देव।
उन सम बनने के लिए, पूजें उन्हें सदैव॥6॥
निज सम जिनगुण सम्पदा, हमको करो प्रदान।
'गुप्तिनंदी' की कामना, पूर्ण करो भगवान॥7॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

पाँचों परम पद की सदा जो भक्ति से पूजन करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अरिहंत परमेष्ठी पूजा

(हरिगीता छन्द)

अरिहंत प्रभु हैं वीतरागी, लोकत्रय को जानते ।
सुर-नारकी-तिर्यच आदिक, श्रेष्ठ मंगल मानते ॥
जो काम-क्रोधादिक विनाशक, दे रहे हित देशना ।
हम कर रहें आह्वान् उनका, है जहाँ छल लेश ना ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिन् ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ-तिष्ठ
ठः-ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

निर्मल सुखद शीतल सलिल जो, देह को निर्मल करे ।
जिन भक्ति गंगा का सलिल ही, आत्म को निर्मल करे ॥
अरिहंत मंगल-शरण-उत्तम, सुखद प्रभु की अर्चना ।
निर्मल परम जिनराज अर्चा, से मिटे अघ वंचना ॥1॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शीतल सुगंधित गंध चंदन, तव चरण अर्पण करें ।
जिनवर प्रभो का ध्यान कर, निज आत्म का तर्पण करें ॥ अरिहंत..॥2॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्तम धवल अक्षत मनोहर, पुँज हम लाये प्रभो ।
अक्षय सुखामृत पान करने, चरण में आये विभो ॥ अरिहंत..॥3॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

गेंदा चमेली मोगरा श्री, सुमन सुन्दर ले लिये ।
मदनारि जेता नाथ के, हम चरण अमृत को पिये ॥ अरिहंत..॥4॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रासुक सरस व्यंजन चढ़ायें, श्री प्रभु के सामने ।
जो है महावैरी क्षुधा, उसको नशाया आपने ॥ अरिहंत..॥5॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

हम जगमगाती दीपमाला, से करें प्रभु आरती।
जिनभानु की अध्यात्म दीप्ति, मोहतम संहारती॥
अरिहंत मंगल-शरण-उत्तम, सुखद प्रभु की अर्चना।
निर्मल परम जिनराज अर्चा, से मिटे अघ वंचना॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध चन्दन तगर मिश्रित, धूप से पूजा करें।
ध्यानान्नि में वसुकर्म नाशे, आत्म में झूला करें॥ अरिहंत..॥७॥
ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम संतरा श्रीफल छुहारा, आदि फल के थाल ले।
शिवफल प्रदाता श्री प्रभो को, भेंट कर नत भाल हैं॥ अरिहंत..॥८॥
ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल-गंध-तंदुल-सुमन-व्यंजन, दीप आदिक अर्घ से।
जिनराज की पूजा करें हम, तब परम शिवसुख मिले॥ अरिहंत..॥९॥
ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधान प्रारम्भ

छ्यालीस मूलगुण सम्पन्न अरिहंत परमेष्ठी के अर्घ
जन्म के दस अतिशय

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(सखी छंद)

तन पर तिल स्वेद न आवें, ना मन में खेद जगावें।
निज पर का भेद बतावें, निरवेद स्वयं बन जावें॥१॥
ॐ ह्रीं श्री नित्यंनिःस्वेदतत्त्व गुणसमन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहार करें स्वर्गों का, नीहार नहीं प्रभुवर का।
प्रभुवर गुण के भण्डारा, तुमने भव्यों को तारा॥२॥
ॐ ह्रीं श्री नैर्मल्य गुणसमन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वात्सल्य प्रभु का न्यारा, हो श्वेत रुधिर की धारा।
पायेंगे शिवपुर द्वारा, उसका फल है यह न्यारा ॥3॥

ॐ ह्रीं श्री श्वेत रुधिरान्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम चौरस है संस्थाना, तन सुन्दर भाव महाना।
वे जिनवर दया निधाना, तुम उनके ही गुण गाना ॥4॥

ॐ ह्रीं श्री समचतुरस्रसंस्थानान्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो उत्तम संहनन धारी, पायें जिससे शिवनारी।
हम अर्चा करें तिहारी, बनने तुम सम बलधारी ॥5॥

ॐ ह्रीं श्री वज्रवृषभनाराच संहननान्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तव रूप लोक मनहारी, सबसे सुन्दर सुखकारी।
जो अर्चा करें अनूठी, उसने जिन गुण निधि लूटी ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री अतिशय सुन्दर रूपान्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन अतिशय सुरभित पाया, भविजन का चित्त लुभाया।
वे अर्चित हैं देवों से, सम्मानित हैं भव्यों से ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री सुगन्ध तन गुणान्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लक्षण अठ एक हजार, पाये जो मुक्ति द्वारा।
भक्ति कर विविध प्रकार, आओ प्रभु के दरबारा ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टाधिक सहस्र लक्षणातिशय समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है अतुल पराक्रम जिनका, वो हरें मोह दुष्टों का।
हम करें निरूपम पूजा, उनके बिन शरण न दूजा ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री अतुल्य बल गुणान्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रिय-हित-मित वाणी बोले, जिससे सबका मन डोले।
जननी संग करें किलोले, वात्सल्य हृदय पट खोलें ॥10॥

ॐ ह्रीं श्री प्रियहितवचन गुणान्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान के दस अतिशय

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

प्रभु धर्म सभा के बीच रहे, दिवगंध कुटी में शोभ रहे।
शत योजन तक होवे सुभिक्ष, भविजन जिनको अवलोक रहे॥
प्रभु का पूजन वंदन करके, भक्तों ने पुण्य कमाया है।
तव शरणागत हमने जिनवर, शिवपुर का पथ अपनाया है॥11॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्दिशायाम् शत योजन सुभिक्षकारिणे अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभ प्रांगण में जिन गमन करें, त्रिभुवन का मन हर्षति हैं।
जिनके दर्शन कर भवि प्राणी, भव-भव का मोह नशाते हैं॥ प्रभु का..॥12॥

ॐ ह्रीं श्री गगनगामिने अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन परम अहिंसा धारी हैं, वो हिंसा भाव भगाते हैं।
उनके सन्मुख जाकर सब जन, तिलभर न पाप कमाते हैं॥ प्रभु का..॥13॥

ॐ ह्रीं श्री प्राणिवध निवारकाय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु क्षुधा कर्म का नाश किया, अतएव न कवलाहारी हैं।
वे अतुल वीर्य के धारी हैं, हम आये शरण तिहारी हैं॥ प्रभु का..॥14॥

ॐ ह्रीं श्री कवलाहार वर्जिताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञानी का यह अतिशय, उपसर्ग न उन पर होता है।
उनकी अर्चा में जो तन्मय, उन पर भी कष्ट न होता है॥ प्रभु का..॥15॥

ॐ ह्रीं श्री उपसर्गरहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनका परमौदारिक शुभ तन, मुख चार दिखे सब प्राणी को।
सुर नर मुनिगण सुनने तरसे, उन अरहन्तों की वाणी को॥ प्रभु का..॥16॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्मुखाय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर सब विद्या के स्वामी, त्रिभुवन पति अंतर्यामी हैं।
शिवपथ गामी जन अभिरामी, निर्मल गुण के वे स्वामी हैं॥ प्रभु का..॥17॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वविद्येश्वराय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर की अद्भुत महिमा है, जिनकी छाया नहि पड़ती है।
उनकी अतिशयकारी चर्या, शिवपथ पर अविरल बढ़ती है॥
प्रभु का पूजन वंदन करके, भक्तों ने पुण्य कमाया है।
तव शरणागत हमने जिनवर, शिवपुर का पथ अपनाया है॥18॥

ॐ ह्रीं श्री छायारहित शरीराय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

टिमकार रहित पलकें प्रभु की, यह अतिशय केवलज्ञानी का।
निद्रा जेता आक्रोश रहित, जग के नायक गुणखानी का॥ प्रभु का..॥19॥

ॐ ह्रीं श्री टिमकाररहित नेत्राय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नख केश नहीं बढ़ते प्रभु के, ये दिव्य पुरुष अवतारी हैं।
स्वाभाविक सुन्दरता धारी, जो जन-जन के मनहारी हैं॥ प्रभु का..॥20॥

ॐ ह्रीं श्री समप्रसिद्धनखकेशाय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवकृत 14 अतिशय

(शंभु छंद)

सुरगण चौदह अतिशय करके, प्रभुवर की सेवा करते हैं।
जिनवर की वाणी फैलाकर, शिव सुख का मेवा वरते हैं॥
जिनधर्म दिवाकर जगदीश्वर, उनको हम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
जो समोशरण में शोभ रहे, उनकी शुभ महिमा गाते हैं॥21॥

ॐ ह्रीं श्री अर्द्धमागधीभाषा समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनराज परम बंधु जग के, भव-भव का वैर मिटाते हैं।
वे जन्मजात वैरी का भी, रिपुभाव समूल भगाते हैं॥ जिनधर्म..॥22॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वजनमैत्रीकराय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् ऋतुओं के फल फूल खिले, इक साथ प्रभु के अतिशय से।
मानो प्रभु भक्ति में तत्पर, षट् ऋतुएँ झूमें अनुनय से॥ जिनधर्म..॥23॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वर्तुफलपुष्पादि अतिशयप्राप्ताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक योजन तक पृथ्वी निर्मल, दर्पण समान चम-चम चमके।
प्रभुवर का स्वागत करने को, वह आगे से आगे दमके ॥
जिनधर्म दिवाकर जगदीश्वर, उनको हम अर्घ चढ़ाते हैं।
जो समोशरण में शोभ रहे, उनकी शुभ महिमा गाते हैं ॥24॥

ॐ ह्रीं श्री दर्पणवतभूम्यतिशयप्राप्ताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जीव सुखी हर्षित होते, प्रभु का विहार अतिशय कारी।
संकट संताप नहीं रहते, औ पुण्य बढ़े विस्मयकारी ॥ जिनधर्म.. ॥25॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वजलपरमानन्दत्वातिशयप्राप्ताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर के धर्मसभा पथ पर, चलती है सुरभित मन्द हवा।
जग के सारे भवि प्राणी को, होती वह उत्तम सौख्य दवा ॥ जिनधर्म.. ॥26॥

ॐ ह्रीं श्री मंदसुगन्ध पवनातिशयप्राप्ताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पृथ्वी निष्कंटक रहती है, वायु कुमार देवों द्वारा।
प्रभुवर चलते भू से ऊपर, फिर भी होता अतिशय न्यारा ॥ जिनधर्म.. ॥27॥
ॐ ह्रीं श्री वायुकुमारोपशमित धूलिकंटकादि अतिशय प्राप्ताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनशासन के चहुँदिश में जब, होती है गंधोदक वर्षा।
तब नभतल में सुरनर नाचे, जयघोष करें हर्षा-हर्षा ॥ जिनधर्म.. ॥28॥
ॐ ह्रीं श्री गंधोदकवृष्टि कराय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभतल पर सुरकृत स्वर्णकमल, उस पर जिनवर के चरण कमल।
विहरण करते प्रभु पाद युगल, हरते भव्यों का अन्तरमल ॥ जिनधर्म.. ॥29॥
ॐ ह्रीं श्री स्वर्ण कमल रचना अतिशय प्राप्ताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब वृक्ष लतायें पुष्प पत्र, फल के भारों से झुकती हैं।
मानो वे श्रेष्ठ सुफल दाता, प्रभु का अभिनंदन करती हैं ॥ जिनधर्म.. ॥30॥
ॐ ह्रीं श्री फलभारनम्र सर्वधान्यातिशय प्राप्ताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर की समवशरण महिमा, सब रोग शोक संताप हरे।
जो प्रभु अर्चा में तन्मय हैं, उनके जन्मों के पाप हरे॥
जिनधर्म दिवाकर जगदीश्वर, उनको हम अर्घ चढ़ाते हैं।
जो समोशरण में शोभ रहे, उनकी शुभ महिमा गाते हैं॥31॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वजनरोगशोकबाधारहितत्व अतिशय प्राप्ताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकाश रहे निर्मल सुखमय, ना क्षोभ क्लान्ति उत्पात वहाँ।
ओला वर्षा और वज्रपात, ना होते हैं दिन-रात जहाँ॥ जिनधर्म..॥32॥
ॐ ह्रीं श्री निर्मलाकाशादि अतिशय प्राप्त अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यक्षेन्द्र शीश पर धर्मचक्र ले, चलते जिनवर के आगे।
उसकी शुभ किरणों को लखकर, भव्यों का पाप तिमिर भागे॥ जिनधर्म..॥33॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्रातिशय समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्पण निर्मल करके अर्पण, देवों ने पुण्य कमाया है।
जिनका संयम शुभ दर्पणवत्, उनका शुभ संगम पाया है॥ जिनधर्म..॥34॥
ॐ ह्रीं श्री देवोपनीत दर्पणादि मंगलद्रव्य विभूषिताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट महाप्रातिहार्य पूजित अरिहंत के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(शंभु छंद)

जिस तरु के नीचे प्रभु बैठे, केवलज्ञानी हो जाते हैं।
उस तरु अशोक की छाया में, सब रोग शोक नश जाते हैं॥
वसु प्रातिहार्य मंगलकारी, यशगान तिहारा गाते हैं।
तुम सम प्रभुवर बनने को हम, अघहारी अर्घ चढ़ाते हैं॥35॥
ॐ ह्रीं श्री अशोक तरु महाप्रातिहार्याय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर नभ से जय-जयकार करें, औ पुष्पों की वर्षा करते।
अतिशय प्रभुवर की महिमा का, वे पुष्प सभी सीधे गिरते॥ वसु..॥36॥
ॐ ह्रीं श्री सुरपुष्पवृष्टि प्रातिहार्याय समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर चमर दुराते प्रभुवर पर, जैसे झरता उज्ज्वल झरना।
चौंसठ चमरों से शोभमान, प्रभु को वरती मुक्ति अंगना॥
वसु प्रातिहार्य मंगलकारी, यशगान तिहारा गाते हैं।
तुम सम प्रभुवर बनने को हम, अघहारी अर्घ चढ़ाते हैं॥37॥

ॐ ह्रीं श्री चतुषष्टिचामर वीज्जमानाय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभुवर के पीछे भामण्डल, दिनकर वत दम-दम दमक रहा।
भव सात बतायें भव्यों के, प्रभु की महिमा से चमक रहा॥ वसु..॥38॥

ॐ ह्रीं श्री भामण्डल विभूषिताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर दुन्दुभि बाजे बजा-बजा, प्रभु की महिमा बतलाते हैं।
करके प्रचार तीर्थकर का, वे अमर परम पद पाते हैं॥ वसु..॥39॥

ॐ ह्रीं श्री देवदुन्दुभिप्रातिहार्य विराजिताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रय छत्र देवकृत शोभ रहे, मणिमय मुक्ता झालर वाले।
त्रिभुवन पर प्रभुवर का शासन, यह छत्र स्वयं ही कह डालें॥ वसु..॥40॥

ॐ ह्रीं श्री छत्रत्रय विभूषिताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हन्तों के सब अंगों से, ओंकार मयी वाणी खिरती।
जिसको पाकर भविजन राशी, निशदिन भवसागर से तिरती॥ वसु..॥41॥

ॐ ह्रीं श्री दिव्यध्वनि प्रातिहार्य समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंहासन सुन्दर मन भावन, उसके ऊपर है कमलासन।
उसके भी चतुरंगुल ऊपर, प्रभुवर बैठे धर पद्मासन॥ वसु..॥42॥

ॐ ह्रीं श्री सिंहासनस्थित अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंत चतुष्टय (गीता छंद)

ज्ञानावरण को घात जिनवर परम ज्ञानी हो गये।
सर्वज्ञ जिनवर वीतरागी निज सकल गुण पा गये॥
अर्हत कर्मन् अंत कर काटें करम की अर्गला।
जल चंदनादिक् अर्घ ले प्रभु भक्ति करने में चला॥43॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतज्ञान समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन अनंतविधातने वाले करम को हर लिया।
दर्शन अनंत लहा प्रभो ने मुक्ति संगम कर लिया॥
अर्हत कर्मन् अंत कर काटें करम की अर्गला।
जल चंदनादिक् अर्घ ले प्रभु भक्ति करने में चला॥44॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतदर्शन समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह मोहनी त्रयलोक को निज सौख्य से करती जुदा।
जिनवर अनंतों सौख्य पायें मोह को करके विदा॥ अर्हत कर्मन्॥45॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतसुख समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्म गुण में लीन हो वरते चरम बल को प्रभो।
अर्हन्त पद में हो गयी उसकी ही अभिव्यक्ति विभो॥ अर्हत कर्मन्॥46॥
ॐ ह्रीं श्री अनंतवीर्य समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ (गीता छंद)

चऊँ घाति कर्म विनाश जिनवर वीतरागी हो गये।
करके धरम की देशना वे मुक्ति भागी हो गये॥
छ्यालीस गुण से युक्त जिनवर की करूँ आराधना।
उनके परम सानिध्य में हो मोक्षपथ की साधना॥

ॐ ह्रीं श्री षट्चत्वारिंशद् गुण समन्विताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- हेम पात्र में नीर ले, कर त्रय शांतिधार।
कुसुम पुंज अर्पण करें, पायें सौख्य अपार॥

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र- ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं। (9, 27, 108 बार जाप करें।)

जयमाला

दोहा- वीतराग सर्वज्ञ वा, हित उपदेशी महान।
उनके छ्यालिस मूलगुण, बोधि समाधि निधान॥

(शंभु छन्द)

जय-जय तीर्थकर गुण आकर, अर्हंत केवली जिनस्वामी ।
छ्यालीस सुगुण मंडित जिनवर, अठदश निर्दोष त्रिजगनामी ॥
धनु पाँच सहस्र अधर ऊपर, तीर्थकर समवशरण राजे ।
उपसर्ग मूक केवली आदि, निज-निज की गंधकुटी राजे ॥1॥
जीवंत जिनेश्वर का दर्शन, भव-भव का पुण्य कराता है ।
पर उनकी प्रतिमा का दर्शन, त्रयकाल सुलभ हो जाता है ॥
अर्हंत देव की पूजा के, छह भेद श्रेष्ठ बतलाये हैं ।
नामादिक छह निक्षेपों से, अरिहंत पूज्य बतलायें हैं ॥2॥
अतिशयकारी जिन प्रतिमायें, पूजक के पाप नशाती हैं ।
बिन मांगे हर आराधक के, सब विघ्न कष्ट विनशाती हैं ॥
प्रभु की अति पावन पूजा से, सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं ।
धनहीन भक्त धनवान बने, सब सुख धन वैभव पाते हैं ॥3॥
कन्यार्थी को अनुकूल श्रेष्ठ, सुन्दर कन्या लक्ष्मी मिलती ।
सन्तानहीन को सुन्दर सुत, अज्ञानी को प्रज्ञा मिलती ॥
अर्हंत देव की पूजन से, सब रोग-शोक मिट जाते हैं ।
शशि और शुक्रग्रह संबंधी, सारे कुयोग मिट जाते हैं ॥4॥
अर्हन्त नाम गुणगान सदा, त्रयकालिक कर्म विनाश करें ।
श्रद्धायुत सम्यक् चिन्तन भी, क्षायिक सद्ज्ञान प्रकाश करें ॥
ऐसे गुणपूर्ण जिनाधिप की, गुणमाल मुनीश सुनाते हैं ।
कर 'गुप्ति' पूर्ण शिवराज वरें, ऐसे शुभभाव बनाते हैं ॥5॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिने जयमाला पूर्णाघ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(गीता छन्द)

पाँचों परम पद की सदा जो भक्ति से पूजन करें ।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें ॥
फिर धर क्षमादिक धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे ।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे ॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

सिद्ध परमेष्ठी पूजा

(शंभु छन्द)

सम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सुवीर्य, सूक्ष्मत्व शुद्ध अवगाहन हो।
हो अगुरुलघू गुणधारी वा, अव्याबाधी को वन्दन हो॥
लोकाग्रवास करने वाले, सब सिद्धों का आह्वानन है।
अविराम सिद्धपद पाने को, अभिनन्दन गुणगण थापन है॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ
ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अडिल्ल छन्द)

मंत्रपूत प्रासुक निर्मल जल ले लिया।
जन्मादिक त्रय नाशन हित अर्पण किया॥
लोककाल त्रयवर्ती सिद्धसमूह को।
पूजँ नशने निज वसु कर्म समूह को॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चन्दन देहताप पीड़ा हरे।
उनको अर्पित जो निज में क्रीड़ा करें॥ लोक...॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय सुखदाता सिद्धों को पूजता।
तव पूजक पाये तुम जैसी पूज्यता॥ लोक...॥३॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मन्मथ दर्प दलन सब सिद्धों ने किया।
इसविध मैंने पद्म सद्य अर्पण किया॥ लोक...॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

गुझिया पूड़ी व्यंजन से अर्चा करूँ।
क्षुधा दमन हित सिद्धन् गुण चर्चा करूँ॥ लोक...॥५॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मृण्मय घृत दीपक से जिन आराधना ।
सिद्ध शरण देने वाली यह साधना ॥
लोक-काल त्रयवर्ती सिद्धसमूह को ।
पूजूँ नशने निज वसु कर्म समूह को ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अगर-तगर मय सुरभित धूपों के घड़े ।
कर्म दहन हित सर्व सिद्ध जिन को चढ़ें ॥ लोक... ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

आम खजूर कपित्थ आदि फल से भजूँ ।
शिवफल पाऊँ स्वयं सिद्धपद को जजूँ ॥ लोक... ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल-फल आदिक मिश्रित अर्पित अर्घ में ।
पद अनर्घ पा वरूँ सिद्ध का वर्ग मैं ॥ लोक... ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विधान प्रारम्भ

८ गुण सहित सिद्धों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

दोहा- सब सिद्धों के जाप से, सिद्ध होय सब काम ।
सिद्ध बने निज आत्मा, पहुँचे मुक्ति मुकाम ॥

(चौपाई)

ज्ञानावरण तिमिर को नाशे, गुण अनंत ज्ञानात्म प्रकाशे ।
उन सिद्धों को शीश झुकायें, रत्नत्रय हित अर्घ चढ़ायें ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतज्ञान गुण समन्विताय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्म दर्शनावरण नशाया, तब अनंत दर्शन गुण पाया ॥ उन.. ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तदर्शनगुण समन्विताय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंतराय की आय निरोधी, अतुल वीर्य धारे शिव शोधी।

उन सिद्धों को शीश झुकायें, रत्नत्रय हित अर्घ चढ़ायें॥३॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतवीर्यगुण समन्विताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह मल्ल को जिस क्षण मारा, वरा अनंत सौख्य भण्डारा॥ उन..॥४॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तसुखगुण समन्विताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोत्र कर्म को जिस क्षण मारा, तत्क्षण अगुरुलघुगुण धारा॥ उन..॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अगुरुलघुगुण समन्विताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नामकर्म जड़ से विनशाया, तब सूक्ष्मत्व अनंत उपाया॥ उन..॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सूक्ष्मत्वगुण समन्विताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म वेदनी को विघटाया, अव्याबाध परम गुण पाया॥ उन..॥७॥

ॐ ह्रीं श्री अव्याबाधगुण समन्विताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आयु कर्म बंधन परिहारें, वे जिन अवगाहन गुण धारें॥ उन..॥८॥

ॐ ह्रीं श्री अवगाहनगुण समन्विताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ

(हरिगीता छंद)

निर्मल निरंजन नित्य निर्भय, नय निपुण निज में रमें।

अक्षय अजर अकलंक अविचल, अमर आतम में रमें॥

आनंदनंदन आत्मरंजन, की करू नित अर्चना।

शुद्धात्म शुद्ध प्रबुद्ध, जिनवर सिद्ध की शुभ वंदना॥

ॐ ह्रीं अर्ह अष्ट मूलगुणसहित श्री सिद्धपरमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- निर्मल शांतिधार, कंचन घट जल से भरा।

पुष्प मनोज्ञ अपार, पुष्पाञ्जलि अर्पण करूँ॥

शांतये शांतिधारा.....दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्री अर्ह अनाहत विद्यायै सिद्धाधिपतये नमः। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा

सिद्ध शिवालय में बसे, उनको करूँ प्रणाम।
जयमाला प्रभु नाम की, मंगलमय सुख धाम॥

(शेर छन्द)

जय-जय अनंत सिद्ध अग्रलोक विराजे।
जय-जय अनंत सिद्ध तीन लोक में साजे॥
प्रभु ध्यान अग्नि में प्रवीण कर्म हने थे।
जिन अष्टकर्म नाश श्रेष्ठ सिद्ध बने थे॥1॥
जिन दशवें गुणस्थान मोहकर्म नशाया।
छद्मस्थ वीतराग नाम बारवें पाया॥
फिर बारवें उपान्त तीन घाति नशायें।
त्रैलोक्य भासमान ज्ञानसूर्य को पायें॥2॥
जिनवर अनंतज्ञान से त्रिलोक देखते।
निज आत्म के अनंतगुण अशोक लेखते॥
जय अंत में अघाति कर्म भी विनाशते।
अरहंत रूप छोड़ सिद्धलोक वासते॥3॥
उपसर्ग चारविध सहें उपसर्गके वली।
कितने अयोग बन गये थे मूकके वली॥
कोई सयोगके वली अंतर्मूहूर्त में।
जिन अंतःकृत बने अशेष कर्म को हने॥4॥

सिद्धों की अर्चना समस्त कार्य सिद्धी दें ।
सब ऋद्धि संपदा दिला के मोक्ष सिद्धी दे ॥
रवि और भौम ग्रह के सर्व रिष्ट भी हरे ।
जो नाम जपे आपका वो इष्ट सुख वरें ॥5॥
उन सर्व सिद्ध की यहाँ उपासना करें ।
सम्पूर्ण सिद्धि हेतु नित आराधना करें ॥
मैं सिद्धभक्ति कर समाधिभाव को वरूँ ।
त्रय 'गुप्ति' पूर्ण पाल मुक्तिराज को वरूँ ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(गीता छंद)

पाँचों परम पद की सदा, जो भक्ति पूजन करें ।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो, सुर-नर उसे वंदन करें ॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को, शिवराज वे पा जायेंगे ।
त्रय 'गुप्ति' का व्रत पूर्ण कर, भवदुःख कभी ना पायेंगे ॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

आचार्य परमेष्ठी पूजा

(शंभु छन्द)

हे ऋषिनायक ! गुणमणिदायक, तव पद में शीश झुकाता हूँ।
तुम सम निज रूप बनाने को, तव गुण में ध्यान लगाता हूँ॥
दीक्षा-शिक्षा अनुग्रह दाता, छत्तीस गुणों को पाया है।
आह्वानन और थापन करने, यह भक्त शरण में आया है॥1॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिन् ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ
ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चौपाई (आंचली बद्ध)

निर्मल जल के कलश भराय, गुरु पद में त्रय धार कराय।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥
छत्तिस गुणधारी ऋषिराज, उनको पूजे भव्य समाज।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥1॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन संग कपूर घिसाय, ऋषिनायक के पद अर्चाय।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥ छत्तिस गुणधारी..॥2॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ता तंदुल भर-भर लाय, गुरु सम्मुख त्रय पुँज चढ़ाय।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥ छत्तिस गुणधारी..॥3॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

नीरज भूमिज पुष्प मनोज्ञ, यतिपद भज हर मन्मथरोग।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥ छत्तिस गुणधारी..॥4॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

षट्स व्यंजन लिये हजार, ऋषिपद पूज करूँ जयकार।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥ छत्तिस गुणधारी..॥5॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत दीपक ले बहुत प्रकार, आरति करूँ तिमिर क्षयकार।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो ॥
छत्तिस गुणधारी ऋषिराज, उनको पूजे भव्य समाज।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर कपूर सुमिश्रित धूप, अग्निपात्र धर खेऊँ अनूप।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो ॥ छत्तिस गुणधारी..॥7॥
ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला आम फनस जंबीर¹, फल से पूज वरूँ जगतीर।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो ॥ छत्तिस गुणधारी..॥8॥
ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ चढ़ाय भविक हर्षाय, पद अनर्घ जिससे मिल जाय।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो ॥ छत्तिस गुणधारी..॥9॥
ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- छत्तिस गुणधारी गुरु, श्री आचार्य महान्।
उनके गुण पाने करें, हम यह श्रेष्ठ विधान॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

बारह तप के अर्घ
(सखी छंद)

बहुविध अनशन तप धारें, निज काय ममत्व निवारे।
ऋषिवर द्वादश तपधारी, हम भक्ति करें मनहारी॥1॥
ॐ ह्रीं श्री अनशन तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ऊनोदर तप अपनाते, निज रसना पर जय पाते॥ ऋषिवर...॥2॥
ॐ ह्रीं श्री अवमोदर्य तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. नींबू

व्रत परिसंख्यान करें जो, बहुविध संकल्प धरे वो।

ऋषिवर द्वादश तपधारी, हम भक्ति करें मनहारी॥३॥

ॐ ह्रीं श्री वृत्तिपरिसंख्यान तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् रस के जो परित्यागी, श्रमणाधिपती वैरागी॥ ऋषिवर...॥४॥

ॐ ह्रीं श्री रसपरित्याग तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अति दुर्द्धर तप स्वीकारें, गुरु काय क्लेश व्रत धारें॥ ऋषिवर...॥५॥

ॐ ह्रीं श्री कायक्लेश तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरुवर एकांत निवासी, विविक्त आसन अभ्यासी॥ ऋषिवर...॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विविक्तशयनासन तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रायश्चित्त तप को धारा, निज पर का शल्य निवारा॥ ऋषिवर...॥७॥

ॐ ह्रीं श्री प्रायश्चित्त तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृढ़ विनय धर्म अपनाया, अविनीत भाव विनशाया॥ ऋषिवर...॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विनय तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित वैयावृत्ति करें हैं, तीर्थकर धर्म वरे हैं॥ ऋषिवर...॥९॥

ॐ ह्रीं श्री वैयावृत्ति तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वाध्याय महातप पाया, निज प्रज्ञा दीप जलाया॥ ऋषिवर...॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री स्वाध्याय तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्युत्सर्ग परम तप धारा, तन का ममत्व परिहारा॥ ऋषिवर...॥११॥

ॐ ह्रीं श्री व्युत्सर्ग तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु ध्यानानल प्रगटायें, उसमें निज कर्म जलायें॥ ऋषिवर...॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री ध्यान तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश धर्म के अर्घ (दोहा)

दावानल से भी अधम, क्रोधानल कहलाय।

उसे जीत आचार्यवर, क्षमा धरम अपनाय॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम क्षमाधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान आत्म गुण को हने, संकट पट दे खोल।

मद जेता ऋषिराज की, हे प्राणी ! जय बोल ॥14॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम मार्दवधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कपट आत्म पट से हटा, ऋजुता भाव बनाय।

आर्जव धनी मुनीश को, हम सब अर्घ्य चढ़ाय ॥15॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आर्जवधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ हरे संतोष धर, गुरुवर परम प्रवीण।

शौच धर्म धारी गुरु, तव पद में मन लीन ॥16॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम शौचधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब असत्य परिहार कर, पाया सत्य स्वराज।

सत्पथ धर गणनाथ की, भक्ति रचायें आज ॥17॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम सत्यधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यम वा कर्म विनाशने, संयम धरें गणेश।

उन सम संयम धारने, अर्चा लीन सुरेश ॥18॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम संयमधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश तप की धार से, होय निरंजन आत्म।

उत्तम तप को धारकर, श्रमण बने परमात्म ॥19॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम तपधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर परिग्रह के राग से, जले द्वेष की आग।

उसे त्याग आचार्यवर, बने परम गत राग ॥20॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम त्यागधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकिंचन वृष के धनी, तजें सकल व्यामोह।

श्रमण संघ नायक बने, करे मोक्ष आरोह ॥21॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम आकिंचन्यधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घोर शील व्रत पाल कर, करते ब्रह्म विहार।

धर्म केतु आचार्यवर, वृष गुण के दातार ॥22॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तम ब्रह्मचर्यधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचाचार के अर्घ (चौपाई)

निर्मल दर्शन करे करावें, दर्शनीय आचार बनावें।

पंचाचारी गुरु को ध्याओ, पंचाचार परम गुण पाओ॥23॥

ॐ ह्रीं श्री दर्शनाचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान योग करते करवाते, जग में ज्ञानामृत बरसाते॥ पंचाचारी...॥24॥

ॐ ह्रीं श्री ज्ञानाचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृढ़ चरित्र को वरें मुनीशा, बनते स्वयंबुद्ध जगदीशा॥ पंचाचारी...॥25॥

ॐ ह्रीं श्री चारित्राचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप आचार करें करवाते, स्वयं शुद्ध कुंदन बन जाते॥ पंचाचारी...॥26॥

ॐ ह्रीं श्री तपाचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन अनगूहित वीर्याचारी, जीते कर्मन् मल्ल जितारी॥ पंचाचारी...॥27॥

ॐ ह्रीं श्री वीर्याचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् आवश्यक के अर्घ (चौपाई)

समता रस को प्रतिपल पीते, समता मय गुरु जीवन जीते।

षट् आवश्यक करें कराते, उन्हें यहाँ हम अर्घ चढ़ाते॥28॥

ॐ ह्रीं श्री समतावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो निशदिन संस्तव करते हैं, उन सम गुण निधियाँ वरते हैं॥ षट्...॥29॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति स्तवावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हत् सिद्धों के गुण गाते, जिन पद में निज प्रीति लगाते॥ षट्...॥30॥

ॐ ह्रीं श्री वंदनावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पापों का अतिक्रमण हटाते, निशिवासर प्रतिक्रमण कराते॥ षट्...॥31॥

ॐ ह्रीं श्री प्रतिक्रमणावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्याख्यान करें गण स्वामी, भवदधि तिरने अन्तर्यामी॥ षट्...॥32॥

ॐ ह्रीं श्री प्रत्याख्याननावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काया से ममता को छोड़ें, शिवरमणी से नाता जोड़ें॥ षट्...॥33॥

ॐ ह्रीं श्री कायोत्सर्गावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन गुप्ति के अर्घ (शंभु छंद)

निज मन का रोधन कर ऋषिवर, मन बल गुण निधियाँ प्राप्त करें।
मनपर्ययःज्ञान जगाकर वे, निज मन आगम में व्याप्त करें॥
ऐसे ऋषिनायक गुरुवर के, गुण में हम ध्यान लगाते हैं।
त्रय गुप्ति महागुण पाने को, भक्ति से अर्घ्य चढ़ाते हैं॥34॥

ॐ ह्रीं श्री मनोगुप्ति गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ वचनामृत का पान करा, फिर वचन कला व्यापार तजा।
व्रत वचो गुप्ति का पालन कर, निज आनंद मय पीयूष चखा॥ ऐसे..॥35॥
ॐ ह्रीं श्री वचनगुप्ति गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतापन आदि योग धार, गुरु काय गुप्ति पालन करते।
तप ज्ञान ध्यान में तन्मय हो, अन्तस का प्रक्षालन करते॥ ऐसे..॥36॥
ॐ ह्रीं श्री कायगुप्ति गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ (शंभु छंद)

तप द्वादश धर दश धर्म वरें, आचार पंच अपनाते हैं।
षट् आवश्यक त्रय गुप्ति धर, शिष्यों से भी पलवाते हैं॥
छत्तीस गुणाकर ऋषिनायक, उनके गुण नित प्रति गाते हैं।
तुम सम गुण निधियाँ पाने को, चरणों में अर्घ चढ़ाते हैं॥
ॐ ह्रीं श्री षट्त्रिंशत् गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- हेम कुम्भ मणि खचित लें, करें भव्य त्रय धार।
पुष्पांजलि अर्पण करें, करने निज उद्धार॥

शांतये शांतिधारा....दिव्य पुष्पांजलि क्षिपेत्।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं णमो आइरियाणं। (9, 27 या 108 बार जाप करें।)

जयमाला

दोहा- शिष्य करे यह प्रार्थना, झुका-झुका कर शीश।
जयमाला हम गा रहे, दो गुरुवर आशीष॥

(शेर छन्द)

जैवंत श्रेष्ठ संत श्री आचार्य महंता,
जय मूलगुण छत्तीस के हि आप धरंता।
जय पाँच हि आचार आप नित्य आचरें,
जय शिष्य वर्ग में भी वो हि प्रेरणा भरें॥1॥
उत्तम क्षमादि धर्म को जो पालते सदा,
द्वादश तपों से आत्मा को तापते सदा।
समतादि षडावश्यकों में लीन वो रहे,
त्रय गुप्तियों को पाल कर्म क्षीण कर रहे॥2॥
शुचि देश-जाति-गोत्र-कुल में जन्म पावते,
निज आचरण उपदेश से सत्पथ दिखावते।
आगम स्वपर को जानकर वे सत्य शोधते,
आगम प्रमाण सूत्र से शिष्यों को बोधते॥3॥
कर बाल-गुरु-वृद्ध-शिष्य-साधु की सेवा,
वात्सल्य हृदय मातृ सदृश हो गुरुदेवा।
शासनपति तुम्ही हो सर्वसंघ के पिता,
संसारी जीव को बतायें मोक्ष का पता॥4॥
तव नाम नाशे गुरु आदि ग्रह की आपदा,
दिलवाये आत्मसौख्य वा अखंड सम्पदा।
हे नाथ ! प्रार्थना है तीन रत्न दीजिये,
मुझ 'गुप्ति' सूरि को भी मोक्षराज दीजिये॥5॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य परमेष्ठिने जयमाला पूर्णाघ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

पाँचों परम पद की सदा जो भक्ति से पूजन करे।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

उपाध्याय परमेष्ठी पूजा

(शंभु छन्द)

हे ऋषि पाठक ! यति अध्यापक, मुनि शिक्षक ज्ञान प्रदाता हो।
हे ज्ञानमूर्ति ! हे उपाध्याय !, रत्नत्रय मार्ग प्रदाता हो॥
श्रुत रूप आप मुनिभूष आप, हम द्वार तिहारे आये हैं।
आह्वानन थापन सन्निधिहित, बहु सुमन पुँज भी लाये हैं॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिन ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-
तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(बसंततिलका छंद)

ये नीर के घट लिये तुम पास आये, रोगादि को लय करें शिववास पाये।
हे पूज्य पाठक ! सदा हम शीश नाये, पूजा करें तम हरे सद्ज्ञान पाये॥1॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

लाये सुचन्दन विभो मम आत्म राजो।

संताप हारक प्रभो ! भव ताप नाशो। हे पूज्य पाठक !.....॥2॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

थाली जिनाक्षत भरी हम आज लाये।

तेरे पुनीत वर से निज राज पाये॥ हे पूज्य पाठक !.....॥3॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बेला गुलाब वसु ले गुरुपाद पूजें।

कामादि को हम हरे सन्मार्ग सूझे। हे पूज्य पाठक !.....॥4॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

पेड़ादि नेवज भरे बहु थाल लायें।

पीड़ा क्षुधा क्षय करें जग भाल पायें। हे पूज्य पाठक !.....॥5॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाना सुरत्न घृत के बहुदीप लाये, ले आरती हम करें तम को नशायें।
हे पूज्य पाठक ! सदा हम शीश नायें, पूजा करें तम हरे सद्ज्ञान पायें ॥6॥
ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ ! धूप घट ले हमने चढ़ाये।
नाशे अशेष अघ को तव रूप ध्यायें। हे पूज्य पाठक !... ॥7॥
ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला अनार फल की हम लाय थाली।
पाये कृपा तव सदा सद्भाग्यशाली। हे पूज्य पाठक !..... ॥8॥
ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादि द्रव्य गुरु को हमने भी भेंटे।
पाये अनर्घ्य पद को सब कष्ट मेंटे। हे पूज्य पाठक !..... ॥9॥
ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

ग्यारह अंग के अर्घ

(काव्य छंद)

श्रमणों का आचार, 'आचारांग' बताये।
श्रमण सिद्धि का सार, सहज सरल समझाये॥
ऋषि पाठक जग पूज्य, द्वादशांग के धारी।
जल चंदन से आज, पूजें सब नर-नारी॥1॥

ॐ ह्रीं श्री आचारांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वपर समय का ज्ञान, 'सूत्र कृतांग' कराये।
उपाध्याय मुनिराज, इसका बोध कराये॥ ऋषि पाठक..... ॥2॥
ॐ ह्रीं श्री सूत्रकृतांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ चेतन का रूप, नाना भेद प्रमाणा।
आगम है 'ठाणांग', उसका भेद बखाना॥ ऋषि पाठक..... ॥3॥
ॐ ह्रीं श्री स्थानांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यादिक् चतुःभेद, उसमें समता लेखे ।
'समवायांग' महान, समीचीन उल्लेखे ॥
ऋषि पाठक जग पूज्य, द्वादशांग के धारी ।
जल चंदन से आज, पूजें सब नर-नारी ॥4॥

ॐ ह्रीं श्री समवायांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जीव अस्ति वा नास्ति, भेद अनेक प्रमाणे ।

श्री 'व्याख्याप्रज्ञप्ति', सम्यक् रूप बखाने ॥ ऋषि पाठक..... ॥5॥

ॐ ह्रीं श्री व्याख्याप्रज्ञप्ति अंगज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तीर्थकर चारित्र, सम्यक्विध दर्शावे ।

'ज्ञातृ धर्मकथांग', आगम निधि कहलावे ॥ ऋषि पाठक..... ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री ज्ञातृधर्मकथांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाक्षिक नैष्ठिक आदि, श्रावक विविध प्रकार ।

'उपासकाध्ययनांग', कहे सूत्र अनुसार ॥ ऋषि पाठक..... ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री उपासकाध्ययनांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

हर तीर्थकर काल, दश अंतःकृत ज्ञाता ।

'अंतःकृत दशांग', उनकी कथा बताता ॥ ऋषि पाठक..... ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री अंतःकृतदशांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- दश यति हर तीर्थेश के, स्वर्ग अनुत्तर पाय ।

'अनुत्तरोपपादिक' महा, उनका त्याग सुनाय ॥

यति शिक्षक जग पूज्य हैं, धारे द्वादश अंग ।

हम उनकी पूजा करें, पायें ज्ञान अभंग ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री अनुत्तरोपपादिक दशांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

आक्षेपिणी आदि कथा, कहे 'प्रश्न व्याकर्ण' ।

संवेगादिक के लिये, लहे जिनागम शर्ण ॥ यति शिक्षक... ॥10॥

ॐ ह्रीं श्री प्रश्नव्याकरणांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री 'विपाक सूत्रांग' में, कर्म दशा उल्लेख ।

उसको सम्यक् जानकर, निज आतम को देख ॥ यति शिक्षक... ॥11॥

ॐ ह्रीं श्री विपाकसूत्रांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चौदह पूर्व के अर्घ (चौपाई)

पूरबगत जिन सूत्र निराला, दृष्टिवाद का भेद विशाला।

श्रुत 'उत्पाद पूर्व' मनहारी, त्रय पर्याय कहे मनहारी॥12॥

ॐ ह्रीं श्री उत्पादपूर्व ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नय दुर्नय षट् द्रव्य बताये, 'अग्रायणीय पूरब' कहलाये।

उपाध्याय गुरु इसके ज्ञाता, उन्हें विनय से अर्घ चढ़ाता॥13॥

ॐ ह्रीं श्री अग्रायणीय पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म स्वपर तप वीर्य बखाना, 'वीर्यानुवाद' ग्रंथ सरधाना।

अध्यापक यति उसको बूझें, हम उनके चरणों को पूजे॥14॥

ॐ ह्रीं श्री वीर्यानुवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आस्ति नास्ति' मय द्रव्य सभी हैं, इस प्रवाद में बात यही है।

जो गुरु इसको पढ़े पढ़ावें, उपाध्याय जग में कहलावें॥15॥

ॐ ह्रीं श्री अस्तिनास्तिप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान पंच विध जग में होता, 'ज्ञानवाद' है इसका स्रोत।

ऋषि पाठक हैं इसके ज्ञानी, भव्य जगत उनका श्रद्धानी॥16॥

ॐ ह्रीं श्री ज्ञानप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त भंग का भान कराता, सत्य तथ्य शिव मग बतलाता।

ऐसे 'सत्यवाद' को धारें, यति पाठक जग वंद्य हमारे॥17॥

ॐ ह्रीं श्री सत्यप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध अशुद्ध सिद्ध संसारी, जीव विचित्र गुणों का धारी।

'आत्म प्रवाद' उसे बतलावें, यति शिक्षक हमको समझावें॥18॥

ॐ ह्रीं श्री आत्मप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की अलबेली माया, 'कर्म प्रवाद' पूर्व में आया।

इसको मुनि अध्यापक जाने, हम आये उनके गुण गाने॥19॥

ॐ ह्रीं श्री कर्मप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- 'प्रत्याख्यान प्रवाद', त्याग क्रिया बतलावता।

मुनि शिक्षक जग वंद्य, उसको धारे चित्त में॥20॥

ॐ ह्रीं श्री प्रत्याख्यान पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत 'विद्यानुप्रवाद', विद्या मंत्रों से भरा।

उसको जाने पूर्ण, ऋषि अध्यापक पूज्य हैं॥21॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यानुवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु 'कल्याण प्रवाद', इक क्षण में वाचन करें।

जो अष्टांग निमित्त, नवग्रह गति फल से भरा॥22॥

ॐ ह्रीं श्री कल्याणवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

'प्राणावाय प्रवाद', आयु की चर्चा करें।

आयुर्वेद प्रवीण, मुनि अध्यापक लोक में॥23॥

ॐ ह्रीं श्री प्राणावाय पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

पूरब 'क्रिया विशाल', छन्द शास्त्र व्याकर्णमय।

उप केवलि भगवान, निश्चय से इसके धनी॥24॥

ॐ ह्रीं श्री क्रियाविशाल पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

'लोक बिन्दु श्रुतसार', लोककरण व्याख्या करें।

इसके ज्ञाता संत, यति अध्येता श्रेष्ठ हैं॥25॥

ॐ ह्रीं श्री लोकबिन्दुसार पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णाघ्य (शंभु छंद)

हम द्वादशांग चौदह पूरब, अंग बाह्य प्रविष्ट सदा वन्दे।

परिकर्म सूत्र प्रथमानुयोग, चूलिका पूर्वगत अभिनन्दे॥

इसके धारक ऋषि अध्यापक, करुणाकर मम अज्ञान हरे।

हम अर्घ मनोज्ञ चढ़ाते हैं, वे निर्मल ज्ञान प्रदान करें॥

ॐ ह्रीं श्री पंचविंशति गुणसहितोपाध्याय परमेष्ठिने पूर्णाघ्य निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- तीन धार कर नीर की, मेढूँ निज भव पीर।

पुष्पांजलि की भेंट दे, नशूँ काम के तीर॥

शांतये शांतिधारा.....दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र- ॐ ह्रीं श्री णमो उवज्झायाणं। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा- द्वादश अंग प्रवीण हैं, उपाध्याय गुरुदेव।
उनकी जय गुणमाल का, कीर्तन करूँ सदैव॥

(पंच चामर छन्द)

जयो-जयो मुनीश आप द्वादशांग धारते।
जयो सुयोग्य शिल्पकार शिष्य को सुधारते॥
नयो-प्रमाण भंग में प्रवीण आप संत हो।
मुनीश आप शर्ण में ममात्म मोह अंत हो॥1॥
ऋषीश अंग बाह्य वा प्रविष्ट में प्रवीण हैं।
अशेष द्रव्य नौ पदार्थ शोध में सुलीन हैं।
गवेषणा करें जिनेश सप्त तत्त्व की सदा।
विशोधना करें विशेष आत्म तत्त्व सर्वदा॥2॥
विशुद्ध चित्त आप मात भारती सुपुत्र हो।
प्रकाण्ड ज्ञान वान मान हीन हो पवित्र हो।
जिनेन्द्र का विशाल ज्ञान आप में सुशोभता।
अभव्य के अगम्य सर्व जीव चित्त लोभता॥3॥
मुनीश आप भक्त पूर्ण अर्घ्य थाल ला रहा।
अशुद्ध आत्म शोधने सुभक्ति गान गा रहा॥
दया करो दया करो, सुशिष्य पे दया करो।
त्रिलोक अग्रवास हेत, 'गुप्ति' पे दया करो॥4॥

ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिने जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

पाँचों परम पद की सदा जो भक्ति से पूजन करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

साधु परमेष्ठी पूजा

(शंभु छन्द)

जो रत्नत्रय संस्कारों से, आत्मिक विकार परिहार करें।
श्रमणोक्त शील शुचि चर्या से, शुद्धात्म भाव साकार करें॥
अठबीस मूलगुण के धारी, आह्वान तुम्हारा करता हूँ।
सुमनावली से स्थापन कर, तव सम रत्नत्रय वरता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिन् ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ
ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

शेर छन्द (तर्ज : हे दीनबन्धु....)

मैं नीर कुंभ ले प्रभु, के पाद धुलाऊँ।
गुरु पाद धुला करके, रोग तीन नशाऊँ॥
ये ज्ञान-ध्यान लीन, साधुओं की अर्चना।
शिवपद प्रदान करती हरके कर्म वंचना॥1॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं चंदनादि लाय, साधु चर्ण चर्चता।
संतप्त चित्त शांति हेतु, नित्य अर्चता॥ ये ज्ञान...॥2॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल सुअक्षतों के, पुँज तीन मैं धरूँ।
अक्षय अखण्ड सिद्धियों के, सौख्य को वरूँ॥ ये ज्ञान...॥3॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ले केवड़ादि गंधवान, पुष्प चढ़ाऊँ।
मन्मथ नशूँ मुनि योग, साधना को बढ़ाऊँ॥ ये ज्ञान...॥4॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे सुपक्व मिष्ट, नेवजों की थाल ले।
हे नाथ ! आप संग पहुँचूँ, लोक भाल पे॥ ये ज्ञान...॥5॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत रत्न दीप लेय मैं, सजाऊँ आरती ।
मोहान्ध नाश मैं लहूँ, श्रुतज्ञान भारती ॥
ये ज्ञान-ध्यान लीन, साधुओं की अर्चना ।
शिवपद प्रदान करती हरके कर्म वंचना ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरभित पुनीत धूप खेऊँ, अग्निपात्र में ।
आठों करम विनाश पाऊँ, ज्ञान गात्र मैं ॥ ये ज्ञान... ॥7॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

केला अनार आदि फल के, ढेर चढ़ाऊँ ।
मैं मोक्ष फल के लाभ योग्य, भाव बढ़ाऊँ ॥ ये ज्ञान... ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल-गंध आदि द्रव्य लेय, अर्घ बनाया ।
पाने अनर्घ सौख्य हेतु, भक्ति से लाया ॥ ये ज्ञान... ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विधान प्रारम्भ

दोहा- अट्ठाइस गुण धारते, सर्व साधु भगवान ।
उनके गुण पाने करें, हम यह श्रेष्ठ विधान ॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पाँच महाव्रत के अर्घ

षट्काय जीव रक्षा करने, मुनि पूर्ण अहिंसा व्रत धारें ।
निज चर्या में मन वच तन से, परिपूर्ण प्राणि वध परिहारें ॥
जो आठ बीस गुण के धारी, कर्मांत करें शिव सुख पावें ।
ऐसे मुनिवर की अर्चा कर, हम भी उन सम व्रत अपनावें ॥1॥

ॐ ह्रीं श्री अहिंसा महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जिन आगम को ही नयन बना, श्रुत सिद्ध वाक्य ऋषिवर बोले ।
सुन सत्य महाव्रत युत वाणी, श्रावक मन शिवपथ पर दौड़े ॥ जो आठ.. ॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सत्य महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पर द्रव्य हरण का चिन्तन भी, जिनको नहीं रंच सुहाता है।
वे मुनि अचौर्य व्रत के धारी, उनको मन शीश झुकाता है॥
जो आठ बीस गुण के धारी, कर्मांत करें शिव सुख पावें।
ऐसे मुनिवर की अर्चा कर, हम भी उन सम व्रत अपनावें॥3॥

ॐ ह्रीं श्री अचौर्य महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर द्रव्य मात्र का रमण तजे, निज आत्म रमण में तन्मय हो।
चौरासी लक्ष व्रत शील भजें, मुनिराज ध्यान में तन्मय हो॥ जो आठ..॥4॥

ॐ ह्रीं श्री ब्रह्मचर्य महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज देह तीन उपकरण सिवा, अन्तर बहि परिग्रह छोड़ दिया।
धर शुक्ल ध्यान श्रेणी मांडे, निज मन को जग से मोड़ लिया॥ जो आठ..॥5॥

ॐ ह्रीं श्री अपरिग्रह महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काया इन्द्रिय से प्रेरित सब, विषयाशा मुनिवर ने त्यागी।
कच्छप सम इन्द्रिय संकोचे, शुद्धात्म शील जिन गतरागी॥ जो आठ..॥11॥

ॐ ह्रीं श्री स्पर्शनेन्द्रिय निरोध व्रत धारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षड् रस में जो रसना माँगे, निःस्पृह यति उसके ही त्यागी।
रसनेन्द्रिय का करते निरोध, ऋषिराज आत्म सुख के भागी॥ जो आठ..॥12॥

ॐ ह्रीं श्री रसनेन्द्रिय निरोध व्रत धारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घ्राणेन्द्रिय की विषयाशा को, संयमचित् यतिवर ने रोका।
अति दुष्कर श्रमण साधना में, निज तन मन आत्म को रोका॥ जो आठ..॥13॥

ॐ ह्रीं श्री घ्राणेन्द्रिय निरोध व्रत धारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्षु चाहे अभिराम दृश्य, यति नेत्र पटल को बन्द किये।
निज ही निज में निज के द्वारा, चैतन्य जन्य पीयूष पिये॥ जो आठ...॥14॥

ॐ ह्रीं श्री चक्षुरेन्द्रिय निरोध व्रत धारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यतिवर प्रज्ञा छैनी लेकर, इन्द्रिय वांछा का अंत करें।
श्रवणेन्द्रि की भौतिक कांक्षा, उपदेशामृत से शांत करें॥ जो आठ...॥15॥

ॐ ह्रीं श्री कर्णेन्द्रिय निरोध-व्रतधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु दर्शन तीर्थाटन आदिक, शुभ हेतुक श्रमण विहार करें।
तब ईर्या पथ से चल यतिवर, प्राणीवध का परिहार करें॥
जो आठ बीस गुण के धारी, कर्मांत करें शिवसुख पावें।
ऐसे मुनिवर की अर्चा कर, हम भी उन सम व्रत अपनावें॥11॥

ॐ ह्रीं श्री ईर्यासमितिधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपदेश पठन पाठन के हित, अनगार शुद्ध आहार करें।
तब हितमित भाषा समिती से, हर प्राणी का उद्धार करें॥ जो आठ...॥12॥

ॐ ह्रीं श्री भाषासमितिधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय धर्माराधन हित, अनगार शुद्ध आहार करें।
तब समिति ऐषणा को पालें, दाता का भी उद्धार करें॥ जो आठ...॥13॥

ॐ ह्रीं श्री ऐषणासमितिधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपकरण उठाने रखने में, षट्काय जीव हिंसा टाले।
गुरु आज्ञा व निर्देशन में, वे श्रमण पाँच समिति पाले॥ जो आठ...॥14॥

ॐ ह्रीं श्री आदान निक्षेपण समितिधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मलमूत्र विसर्जन आदिक में, व्युत्सर्ग समिती अघहारी।
रवि आगम नयन त्रियोगों से, ऋषिवर पाले व्रत सुखकारी॥ जो आठ...॥15॥

ॐ ह्रीं श्री व्युत्सर्गसमितिधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुख-दुःख आदि सब बेला में, समताधर समता भाव धरें।
त्रय संध्या में शुचि ध्यान धरें, निश्चल होकर समभाव वरें॥ जो आठ...॥16॥

ॐ ह्रीं श्री समता आवश्यकधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि चौबीसों तीर्थेश्वर की, सिद्धान्त पूर्ण अर्चा करते।
लय ताल छंद युत प्रस्तुति की, भवि जीव सदा चर्चा करते॥ जो आठ...॥17॥

ॐ ह्रीं श्री स्तव आवश्यक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँचों परमेष्ठी या इक को, वन्दन कर पुण्य कमाते हैं।
सर्वार्थ भरी रचना सुनकर, मुनि चरणों में सब आते हैं॥ जो आठ...॥18॥

ॐ ह्रीं श्री वंदना आवश्यकधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधक निशदिन प्रतिक्रमण करें, निज पापों का निष्क्रमण करें।
परमार्थ नील निर्मल योगी, परमात्म सूत्र में रमण करें॥
जो आठ बीस गुण के धारी, कर्मात्त करें शिवसुख पावें।
ऐसे मुनिवर की अर्चा कर, हम भी उन सम व्रत अपनावें॥19॥

ॐ ह्रीं श्री प्रतिक्रमण आवश्यकधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन शास्त्र कथित प्रत्याख्यानी, संवर करते निज कर्मों का।
शुभ योग लीन वे श्रमण सदा, संचय करते दश धर्मों का॥ जो आठ...॥20॥
ॐ ह्रीं श्री प्रत्याख्यान आवश्यक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन मुनि ने काय ममत्व तजा, कायोत्सर्गासन को धारा।
उपसर्ग परीषह पर जयकर, षट् आवश्यक व्रत स्वीकारा॥ जो आठ...॥21॥
ॐ ह्रीं श्री कायोत्सर्ग आवश्यक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सात विशेष गुण के अर्घ

मध्योत्तम जघन् काल त्रय में, गुरु लोंच करे निज केशों का।
निर्ग्रथ श्रमण पद के धारी, परित्याग करें सब वेशों का॥ जो आठ...॥22॥
ॐ ह्रीं श्री केशलोचन विशेषगुणधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आभूषण केश वसन गृह तज, निर्ग्रन्थ दिगम्बर वेष धरें।
सब द्रव्यभाव परिग्रह तजकर, शुचि संयम ज्ञानोपकरण वरें॥ जो आठ...॥23॥
ॐ ह्रीं श्री अचेल गुणधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्नान महागुणधर मुनिवर मंत्रों से शुचिता करते हैं।
निज आत्म रमण में रत रहकर, पतितों को पावन करते हैं॥ जो आठ...॥24॥
ॐ ह्रीं श्री अस्नान गुणधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित मखमल शयनासन तज, निरवद्य धरा पर शयन करें।
अत्यल्प काल निद्रा लेकर, अवशेष समय श्रुत रमण करें॥ जो आठ...॥25॥
ॐ ह्रीं श्री भूमि शयन गुणधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषिवर अदन्त धावन व्रत ले, तन की सुन्दरता नष्ट करें।
तप तेज पुञ्ज ध्यानानल में, कर्मान्त करें भव कष्ट हरें॥ जो आठ...॥26॥
ॐ ह्रीं श्री अदन्तधावन गुणधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यति ग्लान वृद्ध बालक शिक्षक, इक बार खड़े आहार करें।
निज पद युग संबल नशते ही, जल भोजन का परिहार करें ॥
जो आठ बीस गुण के धारी, कर्मांत करें शिवसुख पावें।
ऐसे मुनिवर की अर्चा कर, हम भी उन सम व्रत अपनावें ॥27॥

ॐ ह्रीं श्री स्थिति भोजन गुणधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

आजन्म एक भुक्ति व्रत ले, इन्द्रिय तन मन का शमन करें।
इस विध मुनि अट्टाईस व्रत से, आठों कर्मों का दमन करें ॥ जो आठ... ॥28॥

ॐ ह्रीं श्री एकभुक्ति गुणधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

धर पंच महाव्रत समिति पंच, मुनि पञ्चेन्द्रिय रोधन करते।
षट् आवश्यक गुण सात वरें, निज आत्म का शोधन करते ॥
छठवे से चौदह गुणस्थान, मुनिराजों के बतलायें हैं।
उन सम रत्नत्रय गुण पाने, हम अर्घ समुच्चय लाये हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री अहिंसादि अष्टाविंशति मूलगुणधारक साधु परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- रत्न हेम रजताभ घट, उनमें नीर अपार।
पुष्पांजलि चढ़ाय के, पाऊँ शिवपुर द्वार ॥

शांतये शांतिधारा....दिव्य पुष्पांजलि क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र- ॐ हः णमो लोए सव्वसाहूणं। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा- ज्ञान ध्यान तप में लगे, विषय विरक्त महंत।
कर्म काटकर ये मुनि, बन जाते भगवंत ॥

(पद्धरि छन्द)

जय-जय निर्ग्रन्थ महंत संत, जय करने आठों कर्म अन्त।
जय श्रमण धर्म पाले महान, प्रगटावे निज में आत्मध्यान ॥1॥
यति गुण धारें शुचि आठबीस, ध्यावें तीर्थकर चारबीस।
सुर-नर-पशु कृत उपसर्ग घोर, चौथा निसर्ग उपसर्ग और ॥2॥

इस बेला में धर साम्यभाव, वे करने निज अघ का अभाव।
 संयम के होवे पाँच भेद, मुनिवर उसको पाले अखेद॥3॥
 द्वादश तप पालें निर्विकार, द्वादश अनुप्रेक्षायें विचार।
 श्रुत द्वादश अंग प्रमाण रूप, मुनि पारायण करते अनूप॥4॥
 अध्ययन-अध्यापन लीन आप, शरणागत को करते विपाप।
 केवली श्रुतकेवली पाद पाय, मुनि षोडशकारण भाव भाय॥5॥
 परभव में धारे धर्मचक्र, नाशें निज का भव भ्रमणचक्र।
 जीते बाईस परिषह विशेष, जिससे पालें मुनि सिद्धवेश॥6॥
 चौसठ ऋद्धि धारें मुनीश, पायें निश्चय लोकाग्र शीश।
 कुल नौ करोड़ में न्यून तीन, मुनिवर होते परमात्म लीन॥7॥
 वे धर्म-शुक्ल दो ध्यान ध्याय, वे सिद्ध बने या स्वर्ग जाय।
 जिनको शनि की बाधा सताय, वह श्रमण संघ की शरण आय॥8॥
 राहू-केतू कृत कष्ट और, तब जपो श्रमण का नाम घोर।
 देवो मुनि को आहार दान, हो जाये तब सब कष्ट म्लान॥9॥
 वे मुनिवर मुझको लेय शर्ण, नाशे मेरा अघ जन्म-मर्ण।
 मैं 'गुप्ति' व्रतों को पूर्ण पाल, काटूँ अपना भव भ्रमण जाल॥10॥
 ॐ ह्रीं श्री साधु परमेष्ठिने जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

पाँचों परम पद की सदा जो भक्ति से पूजन करें।
 त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें॥
 फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
 त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र-णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो
 उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं। (9, 27, 108 बार जाप करें।)

समुच्चय जयमाला

दोहा- अर्हत् सिद्धाचार्य श्री, पाठक वा मुनिराज ।
उनकी जयमाला पढ़ें, पायें आत्म स्वराज ॥

(नरेन्द्र छंद)

पंच परम परमेष्ठी भगवन, मोक्षमार्ग के नेता ।
त्रिभुवन तिलक शिखामणि भगवन, कर्म निर्वतक त्रेता ॥
हित उपदेशी सर्वहितैषी, जिनवर केवलज्ञानी ।
वीतराग अरिहंत प्रभु की, भक्ति शिवसुखदानी ॥1॥
सिद्धों का है रूप अनुपम, शुद्ध बुद्ध अविनाशी ।
क्षायिक दर्शन ज्ञान अनंता, लोकालोक प्रकाशी ॥
ऊर्ध्वलोक में आप विराजे, अष्टकर्म विनशाके ।
पुण्य कमा हम पाप नशायें, सिद्धों के गुण गाके ॥2॥
सर्वश्रेष्ठ आचार्य गुरुवर, दीक्षा शिक्षा दाता ।
पंचाचारी परम तपस्वी, धर्मसूर्य विज्ञाता ॥
घोर तपस्या करते ऋषिवर, भव से पार उतारें ।
चलते-फिरते तीर्थराज ये, सबका भाग्य सवारें ॥3॥
पच्चिस मूलगुणों के धारी, पढ़ते और पढ़ाते ।
श्रुतदेवी माँ की छैया में, गोता गुरु लगाते ॥
उपाध्याय के चरण कमल में, तीन बार शिर नायें ।
दर्श करें भक्ति से उनके, ज्ञान सुधा हम पायें ॥4॥
परम सिद्ध पद पाने हेतु, वेश दिगम्बर धारा ।
सर्व परिग्रह छोड़ दिया है, उनको नमन हमारा ॥
पिच्छी और कमण्डल रखते, ज्ञानाभ्यास करें जो ।
समिति 'गुप्ति' से करें साधना, मुनिवर सिद्ध बने वो ॥5॥

ॐ ह्रीं पंच परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णाध्याय निर्वपामीति स्वाहा ।

(गीता छन्द)

पाँचों परम पद की सदा जो भक्ति से पूजन करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

प्रशस्ति

(दोहा)

पाँचों परमेष्ठी भजूँ, चौबीसों भगवान।
नमूँ शारदा मात को, औ गणधर भगवान॥1॥
आदिनाथ से वीर तक, चौबीसों जिनराज।
वर्धमान हैं अंत में, उनका है साम्राज॥2॥
महावीर के तीर्थ में, हुए बहुत आचार्य।
कुन्दकुन्द आचार्य वा, आदि सिंधु आचार्य॥3॥
महावीर कीर्ति गुरु, उनके शिष्य महान्।
कुंथु सागराचार्य हैं, उनके शिष्य महान्॥4॥
सौ मुनियों आचार्य के, गुरुवर हैं आचार्य।
उनसे मैं दीक्षित श्रमण, गुप्तिनंदी आचार्य॥5॥
नश्वर निज वय भाव का करते सदुपयोग।
किया सृजन कुछ ग्रंथ का, भक्ति परक शुभ योग॥6॥
पंच परम पद देव का, छोटा लिखा विधान।
प्रतिफल में हमको मिले, शाश्वत मोक्ष महान॥7॥
जब तक सूरज-चाँद हैं, तब तक रहे विधान।
त्रय माताओं ने दिया, इस विधान.....॥8॥
मुझसे दीक्षित शिष्य जो, उन सबका सहयोग।
प्रतिफल में सबको मिले, मुक्ति रमा का योग॥9॥

श्री पंच परमेष्ठी आरती

—ग.आर्यिका राजश्री माताजी

ॐ जय केवलज्ञानी, हो स्वामी जय केवलज्ञानी।
आरती करते सब मिल, बन जायें ज्ञानी॥ ॐ जय...
अतिशय चौंतीस के तुम धारी, हित उपदेशी महान्। हो स्वामी हित...
वीतराग अरिहंत प्रभुजी-२, छोड़ूँ मिथ्याज्ञान ॥ ॐ जय...
अष्टकर्म से रहित जिनेश्वर, गुण अनंत धारी। हो स्वामी गुण...
ज्ञाता दृष्टा सिद्ध प्रभुजी-२, वर ली शिवनारी ॥ ॐ जय...
रत्नत्रय के धारी गुरुवर, श्रमण संघ नायक। हो स्वामी श्रमण...
पंचाचारी ऋषिवर-२, हो मंगल दायक ॥ ॐ जय...
मोह तिमिर को हरने वाले, मुनियों के पाठक। हो स्वामी मुनियों...
ज्ञान किरण विकसाते-२, बोधि ज्ञान दायक ॥ ॐ जय...
मुनिव्रतों को धारण करके, करते आत्म ध्यान। हो स्वामी करते...
सुर-नर-किन्नर ध्यावे-२, गाते तव यशगान ॥ ॐ जय...
विषय विकार मिटावो भगवन्, शरण पड़ा तेरी। हो स्वामी शरण...
'राज' मुक्ति को पावे-२, छूटे भव फेरी ॥ ॐ जय...

श्री पंच परमेष्ठी आरती

—आर्यिका आस्थाश्री माताजी

(तर्ज-माईन-माईन...)

पाँचों परमेष्ठी प्रभुवर का, भव्य विधान रचायें।
पंच परम पद पाने हेतु, मंगल आरती गायें॥
बोलो सब जिनवर की जय-2..

1. पाँचों परमेष्ठी भगवन् की, मूरत मंगलकारी।
पाँचों प्रभु के इस विधान में, झूम रहे नर-नारी॥
इनका कीर्तन करने आये, मन मंदिर चमकाये।
पंच परम...
2. अर्हंतों ने मार्ग दिखाया, उस पथ को अपनायें।
सिद्ध सूरि पाठक साधु ये, सबका भाग्य जगायें॥
रत्नमयी नवरंग दीप ये, चम-चम करते लायें।
पंच परम...
3. ढोल मंजीरा वीणा लेकर, घूमर नृत्य रचाते।
प्रभु के दर पे गरबा करके, भव का भ्रमण मिटाते॥
'आस्था' के शुभ दीप जलाकर, केवल ज्योत जगायें।
पंच परम...

श्री विजय पताका विधान

स्वयंभू स्तोत्र

(उपजाति छंद)

येन स्वयं बोधमयेन लोका, आश्वासिताः केचन वित्तकार्ये ।
प्रबोधिताः केचन मोक्षमार्गे, तमादिनाथं प्रणमामि नित्यम् ॥1॥
इन्द्रादिभिः क्षीरसमुद्र-तोयैः, संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेन्द्रः ।
यः कामजेता जन-सौख्यकारी, तं शुद्धभावादजितं नमामि ॥2॥
ध्यान-प्रबन्धः-प्रभवेन येन, निहत्य कर्म-प्रकृतिः समस्ताः ।
मुक्ति-स्वरूपां पदवी प्रपेदे, तं संभवं नौमि महानुरागात् ॥3॥
स्वप्ने यदीया जननी क्षपायां, गजादि वह्नयन्तमिदं ददर्श ।
यत्तात इत्याह गुरुः परोऽयं, नौमि प्रमोदादभिनन्दनं तम् ॥4॥
कुवादि-वादं जयता महान्तं, नय-प्रमाणैर्वचनैर्जगत्सु ।
जैनं मतं विस्तरितं च येन, तं देव-देवं सुमतिं नमामि ॥5॥
यस्यावतारे सति पितृधिष्णये, ववर्ष रत्नानि हरेर्निदेशात् ।
धनाधिपः षण्णव-मासपूर्व, पद्मप्रभं तं प्रणमामि साधुम् ॥6॥
नरेन्द्रसर्पेश्वर - नाकनाथैर्वाणी, भवन्ती जगृहे स्वचित्ते ।
यस्यात्मबोधः प्रथितः सभाया, महं सुपाश्वं ननु तं नमामि ॥7॥
सत्प्रातिहार्यातिशय - प्रपन्नो, गुणप्रवीणो हत-दोष-संगः ।
यो लोक-मोहान्ध-तमः-प्रदीपश्चन्द्रप्रभं तं प्रणमामि भावात् ॥8॥
गुप्तित्रयं पञ्च महाव्रतानि, पञ्चोपदिष्टाः समितिश्च येन ।
बभौ यो द्वादशधा तपांसि, तं पुष्पदन्तं प्रणमामि देवम् ॥9॥
ब्रह्मा-व्रतान्तो जिन नायके नोत्, तम-क्षमादिर्दशधापि धर्मः ।
येन प्रयुक्तो व्रत बंधबुध्या, तं शीतलं तीर्थकरं नमामि ॥10॥

गणे जनानन्दकरे धरान्ते, विध्वस्त - कोपे प्रशमैकचित्ते ।
 यो द्वादशाङ्गं श्रुतमादिदेशं, श्रेयांसमानौमि जिनं तमीशम् ॥11॥
 मुक्त्यङ्गनाया रचिता विशाला, रत्नत्रयी-शेखरता च येन ।
 यत्कण्ठ-मासाद्य बभूव श्रेष्ठा, तं वासुपूज्यं प्रणमामि वेगात् ॥12॥
 ज्ञानी विवेकी परम स्वरूपी, ध्यानी व्रती प्राणि-हितोपदेशी ।
 मिथ्यात्वघाती शिवसौख्यभोजी, बभूव यस्तं विमलं नमामि ॥13॥
 आभ्यन्तरं बाह्यमनेकधा यः, परिग्रहं सर्व मपाचकार ।
 यो मार्गमुद्दिश्य हितं जनानां, वन्दे जिनं तं प्रणमाम्यनन्तम् ॥14॥
 सार्द्धं पदार्था नव सप्त तत्त्वैः, पञ्चास्तिकायाश्च न कालकायाः ।
 षड्द्रव्यनिर्णीति-रलोकयुक्तिर्, येनोदिता तं प्रणमामि धर्मम् ॥15॥
 यश्चक्रवर्ती भुवि पञ्चमोऽभूच्छीनन्दनो द्वादशको गुणानाम् ।
 निधि-प्रभुः षोडशको जिनेन्द्रसु, तं शान्तिनाथं प्रणमामि भेदात् ॥16॥
 प्रशंसितो यो न बिभर्ति हर्षं, विराधितो यो न करोति रोषम् ।
 शीलं-व्रताद् ब्रह्मपदं गतो यस्तं, कुन्थुनाथं प्रणमामि हर्षात् ॥17॥
 न संस्तुतो न प्रणतः सभायां, यः सेवितोऽन्तर्गण-पूरणाय ।
 पद-च्युतैः केवलिभि-र्जिनस्य, देवाधिदेवं प्रणमाम्यरं तम् ॥18॥
 रत्नत्रयं पूर्व-भवान्तरे यो, व्रतं पवित्रं कृतवा-नशेषम् ।
 कायेन वाचा मनसा विशुद्ध्या, तं मल्लिनाथं प्रणमामिभक्त्या ॥19॥
 ब्रुवन्नमः सिद्ध-पदाय वाक्य, मित्यग्रहीद्यः स्वयमेव लोचम् ।
 लौकान्तिकेभ्यः स्तवनं निशम्य, वन्दे जिनेशं मुनिसुव्रतं तम् ॥20॥
 विद्यावते तीर्थकराय तस्मा, याहारदानं ददतो विशेषात् ।
 गृहे नृपस्याजनि रत्नवृष्टिः, स्तौमि प्रमाणान्नयतो नमिं तम् ॥21॥

राजीमतीं यः प्रविहाय मोक्षे, स्थितिं चकारा-पुनरागमाय ।
सर्वेषु जीवेषु दया दधानस्तं नेमिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥22॥
सर्पाधिराजः कमठारितो यैर्ध्यान-स्थितस्यैव फणावितानैः ।
यस्योपसर्गं निरवर्तयत्तं, नमामि पार्श्वं महतादरेण ॥23॥
भवार्णवे जन्तुसमूहमेनमाकर्षयामास हि धर्मपोतात् ।
मज्जन्तमुद्वीक्ष्य य एनसापि, श्रीवर्द्धमानं प्रणमाम्यहं तम् ॥24॥
यो धर्मं दशधा करोति पुरुषः, स्त्री वा कृतोपस्कृतं,
सर्वज्ञ-ध्वनि-संभवं त्रिकरण-, व्यापार शुद्ध्यनिशम् ।
भव्यानां जयमालया विमलया, पुष्पाञ्जलिं दापयन्,
नित्यं स श्रियमातनोति सकलं, स्वर्गापवर्ग-स्थितिम् ॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वयंभूस्तोत्राय जलादि महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चौबीस जिन स्तवन

- आर्यिका आस्थाश्री

दोहा

(हर भगवान की स्तुति के साथ पुष्प चढ़ाना है।)

1. ऋषभदेव आदि प्रभु, आद्य बंधु आदीश ।
आदीनाथ पुरुदेव को, सदा झुकाऊँ शीश ॥
चौबीसों भगवान का, रात दिवस लो नाम ।
पूजन भक्ति जाप से, सिद्ध होय सब काम ॥1॥
2. अजितनाथ की जीत ही, सर्व जगत की जीत ।
गणधर इन्द्र न गा सके, प्रभुवर के गुण गीत ॥ चौबीसों...
3. संभव प्रभु के द्वार पे, संभव होवे कार्य ।
लगन लगाओ नाथ से, मन में श्रद्धा धार्य ॥ चौबीसों...

4. जिन अभिनंदन आपका, कैसे हो अभिवंद्य।
हाथों में लेकर सुमन, करता मैं अभिवंद्य ॥ चौबीसों...
5. सुमतिनाथ की अर्चना, कुमति दूर भगाय।
सुमति से सुगति मिले, ऐसी मति हो जाय ॥ चौबीसों...
6. पद्मनाथ को पद्म से, जो पूजे दिन-रात।
पद्मप्रभु के पाद में, पायें सुख सौगात ॥ चौबीसों...
7. श्री सुपाश्वर्य के पास में, भक्त सदा सुख पाय।
प्रभु चरण के पास में, सब संकट मिट जाय ॥ चौबीसों...
8. चंद्रनाथ के चरण में, चंदन नित्य चढ़ाय।
चन्द क्षणों में चन्द्र जिन, रोग शोक विनशाय ॥ चौबीसों...
9. पुष्पों से कोमल विमल, पुष्पदंत भगवान।
पुष्पहार से अर्चना, करते भक्त महान ॥ चौबीसों...
10. शीतलनाथ जिनेन्द्र से, मिला धर्म संदेश।
दश धर्मों को धार लो, काँटों कर्म अशेष ॥ चौबीसों...
11. मेरु पर जिनका हुआ, जन्म समय अभिषेक।
श्रेयनाथ से श्री मिले, चरणों में सर टेक ॥ चौबीसों...
12. मंगलमूर्ति आपकी, वासुपूज्य भगवान।
सर्व अमंगल दूर हो, करो प्रभु कल्याण ॥ चौबीसों...
13. विमलनाथ के नाम से, विमल चित्त हो जाय।
कर्म मलों को नाशके, भक्त विमल बन जाय ॥ चौबीसों...
14. गुण अनंत के ईश हैं, श्री अनंत जगदीश।
त्रिभुवन तिलक स्वरूप जिन, तुम्हें नमाऊँ शीश ॥ चौबीसों...
15. धर्म तीर्थ में धर्म की, धर्म ध्वजा फहराय।
धर्मनाथ के ध्यान से, धर्म जगत में छाय ॥ चौबीसों...

16. कामदेव चक्रीश हो, शांतिनाथ तीर्थेश।
शांतिनाथ शांति करें, शांत दांत परमेश ॥ चौबीसों...
17. कुंथुनाथ को है नमन, शत-शत बार प्रणाम।
मदन अरि जेता प्रभु, सदा जपें नाम ॥ चौबीसों...
18. छह खंडों को जीतकर, अरहनाथ भगवान।
धन वैभव को छोड़कर, किया आत्म कल्याण ॥ चौबीसों...
19. मोह मल्ल के वेश को, मल्लिनाथ विनशाय।
मल्लिनाथ जिनराज की, पूजा भक्ति रचाय ॥ चौबीसों...
20. मुनियों के इस रूप में, मुनिसुव्रत भगवान।
मुनिसुव्रत के ध्यान से, शीघ्र मिले भगवान ॥ चौबीसों...
21. नमिनाथ की भक्ति से, पाऊँगा सद्ज्ञान।
बोधि समाधि का मुझे, देना प्रभुवर दान ॥ चौबीसों...
22. बालयति हो तीसरे, धारा तुमने योग।
योगी नेमीनाथ सम, पाऊँ मैं चिद्योग ॥ चौबीसों...
23. महामंत्र नवकार से, नागयुगल को तार।
पार्श्वनाथ चिंतामणि, मधुवन के आधार ॥ चौबीसों...
24. महावीर औ सन्मति, वर्द्धमान अतिवीर।
पाँच नाम प्रभु आपके, सर्वश्रेष्ठ प्रभुवीर ॥ चौबीसों...
25. प्रभुवर का इक नाम ही, सबमें मंगलकार।
त्रय गुप्ति से नमन है, 'आस्था' हो भव पार ॥
चौबीसों भगवान का, रात दिवस लो नाम।
पूजन भक्ति जाप से, सिद्ध होय सब काम ॥

इत्याशीर्वादिः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री चौबीस जिन पूजा

स्थापना (मत्तगयंद छंद)

श्री वृषभादि जिनेश्वर से अतिवीर जिनेश चराचर ज्ञाता।
शासनकाल सभी जिन का इक स्वर्णिम काल महासुख दाता॥
नैनन से प्रभु नैन मिला इस मण्डल पे हम आज बुलावें।
आन मिलो अब देर करो मत आप बिना मन शांति न पावें॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकराः ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र
तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

स्वर्णिम पांडुक श्रेष्ठ शिला अभिषेक रचावन हेतु बनाई।
स्वर्णिम रत्नज कुंभ लिए अभिषेक करावन भीड़ समाई॥
तीर्थ प्रवर्तक धर्म प्रवर्तक दो हमको भवसिन्धु किनारा।
हे भवतारक, हे दुःखहारक तुम बिन हे प्रभु कौन हमारा॥ 1 ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दन कानन¹ का शुचि चन्दन ताप विभञ्जन हेत चढ़ाओ।
श्रेष्ठ जिनन्दन का पद संगम पा भव क्रन्दन शीघ्र भगाओ॥ तीर्थ...॥ 2 ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण सिंहासन पे अधरासन श्री जिनशासन नाथ विराजे।
हीरक² नीलम अक्षत ले हम भेंट करें बजवाकर बाजे॥ तीर्थ...॥ 3 ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्तिसती कमलापति को कमलादि चढ़ाकर पुण्य कमाओ।
पुण्य बढ़ाकर पाप घटाकर पुष्प चढ़ाकर काम गमाओ॥ तीर्थ...॥ 4 ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

1. जंगल, 2. हीरा।

नेवज पे बहु नेवज के सजते यह थाल विशाल निराले।
श्रेष्ठ नरोत्तम को अति उत्तम व्यंजन थाल चढ़ा सुख पालें॥
तीर्थ प्रवर्तक धर्म प्रवर्तक दो हमको भवसिन्धु किनारा।
हे भवतारक, हे दुःखहारक तुम बिन हे प्रभु कौन हमारा॥5॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोल सुडौल त्रिकोण व आयत आकृति के हम दीप सजायें।
केवलज्ञान प्रदीपक के जिन मन्दिर में हम दीप चढ़ायें॥ तीर्थ...॥6॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आप कृपापति आप प्रजापति अष्टम भूपतिनाथ हमारे।
धूप चढ़ा वसु कर्म नशे चउबीस प्रभो अब साथ हमारे॥ तीर्थ...॥7॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल का इक तोरण द्वार बना प्रभु के हम द्वार चढ़ायें।
दान सरोवर दान करो अब मोक्ष महाफल को हम पायें॥ तीर्थ...॥8॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

मूर्ति मनोहर कीर्ति मनोहर हे ! परमेश्वर देव तिहारी।
अर्घ चढ़ाकर भक्ति बढ़ाकर भक्त बने तुमसा त्रिपुरारी॥ तीर्थ...॥9॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- आत्म शांति हित मैं करूँ, जिन पद में जल धार।
पुष्पांजलि कर नाथ मैं, वरूँ मोक्ष का द्वार॥

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्

विजय पताका नाम का, करते श्रेष्ठ विधान।
मंडल पर पुष्पाञ्जलि करें चंदेवा नाम॥

(अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(कुसुमलता छंद)

ज्ञान सूर्य को ढकने वाले, ज्ञानावरण कर्म को नाश।
उसे जीत चौबीस जिनेश्वर, पाये केवलज्ञान प्रकाश॥

चौबीसों जिनवर कर देना, मेरे आठों कर्म विनाश।

पूजा मंत्र विधान तिहारा, करे हमारा आत्म विकास॥1॥

ॐ ह्रीं ज्ञानावरण कर्म विजेता श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ सुदर्शन में अवरोधक, कर्म दर्शनावरण प्रधान।

उसे जीत चौबीस जिनेश्वर, पायें क्षायिक दर्श महान॥ चौबीसों..॥2॥

ॐ ह्रीं दर्शनावरण कर्म विजेता श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुख दुःख वेदक कर्मवेदनी, शहद लपेटी ज्यों तलवार।

उसे जीत चौबीस जिनेश्वर, अव्याबाध वरें गुणसार॥ चौबीसों..॥3॥

ॐ ह्रीं वेदनीय कर्म विजेता श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह कर्म कर्मों का राजा, आत्म शक्ति पर करे प्रहार।

उसे जीत चौबीस जिनेश्वर, पायें क्षायिक सुख भंडार॥ चौबीसों..॥4॥

ॐ ह्रीं मोहनीय कर्म विजेता श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आयु कर्म कारागृह¹ जैसा, चारों गति में भ्रमण कराय।

उसे जीत चौबीस जिनेश्वर, अवगाहन गुण को प्रगटाय॥ चौबीसों..॥5॥

ॐ ह्रीं आयुकर्म विजेता श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम कर्म है चित्रकार सम, तन को रूप कुरूप बनाय।

उसे जीत चौबीस जिनेश्वर, गुण सूक्ष्मत्व वरें सुखदाय॥ चौबीसों..॥6॥

ॐ ह्रीं नामकर्म विजेता श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोत्र कर्म भी दुःखदायी है, करता उच्च नीच परिणाम।

उसे जीत चौबीस जिनेश्वर, पायें अगरुलघु गुण धाम॥ चौबीसों..॥7॥

ॐ ह्रीं गोत्रकर्म विजेता श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दानादिक पाँचों कर्मों में, अंतराय ही विघ्न रचाय।

उसे जीत चौबीस जिनेश्वर, क्षायिक वीर्य महागुण पाय॥ चौबीसों..॥8॥

ॐ ह्रीं अंतराय कर्म विजेता श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जेल।

(गीता छंद)

संकट विकट दुःख व्याधियाँ जिसके उदय से आ रही।
मन की सभी दुर्भावना दुष्कर्म नित करवा रही॥
उन सर्व पापों को हरे चौबीस जिन की अर्चना।
मन में बिठा प्रभु आपको हम कर रहे आराधना॥९॥

ॐ ह्रीं मानसिक पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

अपशब्द कह मैंने प्रभो वसु कर्म का बंधन रचा।
वे कर्म जब आये उदय तब चित्त में क्रंदन मचा॥ उन सर्व...॥१०॥
ॐ ह्रीं वाचनिक पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

तन से तनातन खूबकर बहु कष्ट जीवों को दिया।
आया उदय अब पाप का कैसे सहूँ रोवे जिया¹॥ उन सर्व...॥११॥
ॐ ह्रीं कायिक पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

मैंने स्वयं दुष्कर्म कर बहु पाप का अर्जन करा।
जब आ गया उनका उदय तब शोक ने व्याकुल करा॥ उन सर्व...॥१२॥
ॐ ह्रीं स्वयंकृत पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

मन वा वचन-तन-धन लगा जो-जो कराये पाप सब।
उनका उदय पीड़ित करें उनसे बचाओ आप अब॥ उन सर्व...॥१३॥
ॐ ह्रीं कारित पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

मुझ मूर्ख ने प्रभु व्यर्थ ही कर पाप की अनुमोदना।
बांधे भयानक पाप सब तज धर्म की संवेदना॥ उन सर्व...॥१४॥

1. हृदय-मन

ॐ ह्रीं अनुमोदना पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

समता सुधारस छोड़कर, क्रोधाग्नि में प्रभु में जला।
निज धर्म मर्यादा तजी, हो नाथ ! अब कैसे भला॥
उन सर्व पापों को हरे चौबीस जिन की अर्चना।
मन में बिठा प्रभु आपको हम कर रहे आराधना॥15॥

ॐ ह्रीं क्रोधकषाय पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

मैं सर्वश्रेष्ठ महान् हूँ, यह मान जब आया प्रभो।
सबको समझकर तुच्छतम, मैं व्यर्थ भरमाया विभो॥ उन सर्व...॥16॥
ॐ ह्रीं मानकषाय पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

माया महाठगनी मुझे, हरपल भ्रमाये पाप में।
इस पाप से कैसे बचे, यह पथ दिखाया आपने॥ उन सर्व...॥17॥
ॐ ह्रीं मायाकषाय पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

सब पाप का जो बाप है, वह लोभ अहि¹ डसता रहा।
मैं भी निरंतर लोभ में, बहु पाप नित करता रहा॥ उन सर्व...॥18॥
ॐ ह्रीं लोभकषाय पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

संकल्प कर मुझ दुष्ट ने, बहु जीव की हिंसा करी।
उस पाप से कैसे बचूँ, इस हेतु तव अर्चा करी॥ उन सर्व...॥19॥
ॐ ह्रीं संकल्पी हिंसा पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

आरंभ हिंसा की बहुत, गृह कार्य में अतिराग से।
मुझको बचाओ नाथ ! अब, दुष्कर्म की इस आग से॥ उन सर्व...॥20॥

1. साँप।

ॐ ह्रीं आरंभी हिंसा पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उद्योग या व्यापार में, हिंसा कराई या करी।
उस दोष से तारो मुझे, इस हेतु तुम पूजा करी॥
उन सर्व पापों को हरे चौबीस जिन की अर्चना।
मन में बिठा प्रभु आपको हम कर रहे आराधना॥21॥

ॐ ह्रीं उद्योगी हिंसा पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपने विरोधी को पछाड़ा, हो प्रभु जिस दाव से।
तुम ही बचाओ हे प्रभो !, उस कर्म के दुर्भाव से॥ उन सर्व...॥22॥
ॐ ह्रीं विरोधी हिंसा पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शंभु छंद)

जो भी हिंसक परिणामों से, हिंसा में रच-पच जाता है।
वो नर नारक तिर्यचों में, दुस्सह कष्टों को पाता है॥
सब तीर्थकर जिनवर मेरे, इन सब पापों का नाश करो।
सब रोग शोक दुःख संकट हर, मम मन मंदिर में वास करो॥23॥

ॐ ह्रीं हिंसा पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या वचनों का जाल बना, जो जग को ठगता जाता है।
वो वंचक कर्मों के द्वारा, स्वयमेव ठगाया जाता है॥ सब..॥24॥
ॐ ह्रीं असत्य पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो चोर व रिश्वतखोर बने, भ्रष्टाचारी जो होता है।
वो सब जग में अपमानित हो, धन यश सुख वैभव खोता है॥ सब..॥25॥

ॐ ह्रीं चौर्य पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

परनारी माता बहिन सुता¹, इनसे जो खोटा कर्म करे।
वह दुष्कर्मा पापी मानव, दुःख बंधन पा निज शर्म² हरे॥
सब तीर्थकर जिनवर मेरे, इन सब पापों का नाश करो।
सब रोग शोक दुःख संकट हर, मम मन मंदिर में वास करो॥26॥

ॐ ह्रीं कुशील पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

ज्यादा आरंभ परिग्रह रख, यह जीव नरक में फसता है।
या बनकर साँप उसी धन पर, घर वालों को ही डसता है॥ सब..॥27॥
ॐ ह्रीं परिग्रह पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

भोजन संज्ञा के वश होकर, यह जीव महादुःख पाता है।
बेबस³ हो भूख मिटाने को, अतिनिंद्य पाप कर जाता है॥ सब..॥28॥
ॐ ह्रीं आहार संज्ञा पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

निद्रा संज्ञा आ जीवों को, मोहित जड़⁴ सा कर जाती है।
सत्कार्य और शुभ अवसर पर, यह बुद्धि भी सो जाती है॥ सब..॥29॥
ॐ ह्रीं निद्रा संज्ञा पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

भय संज्ञा के कारण प्राणी, भयभीत आत्म बल खोता है।
पर तुम शरणागत प्राणी से, भय संज्ञा को भय होता है॥ सब..॥30॥
ॐ ह्रीं भय संज्ञा पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

1. पुत्री, 2. सुख, 3. मजबूर, 4. मूर्ख।

मैथुन या परिग्रह संज्ञा से, जग जीव भ्रमित हो जाता है।
धन संचय भौतिक भोगों में, सच्चा सुख खोता जाता है॥
सब तीर्थकर जिनवर मेरे, इन सब पापों का नाश करो।
सब रोग शोक दुःख संकट हर, मम मन मंदिर में वास करो॥३१॥

ॐ ह्रीं परिग्रह संज्ञा पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

(कुसुमलता छंद)

इष्ट वियोग अनिष्ट संयोगज, पीड़ा चिंतन और निदान।
चार भेद ये आर्तध्यान के, जो त्यागे उसका कल्याण॥
चौबीसों जिन का हम करते, विजय पताका श्रेष्ठ विधान।
सब तीर्थकर हमको दे दो, वीतराग विज्ञान प्रधान॥३२॥

ॐ ह्रीं आर्तध्यान पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

हिंसा झूठ, विषय संरक्षण, चोरी इन सबका दुर्ध्यान।
रौद्रध्यान ये चार कहाये, इसको त्याग धरें शुभ ध्यान॥ चौबीसों..॥३३॥
ॐ ह्रीं रौद्रध्यान पापजनित उपद्रव निवारक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

आज्ञादिक ये चार ध्यान ही, धर्म ध्यान शिवपुर^१ सोपान^२।
धर्मध्यान को धारें हम सब, छोड़ अनादि के अपध्यान॥ चौबीसों..॥३४॥
ॐ ह्रीं धर्मध्यानप्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार भेद मय शुक्ल ध्यान है, प्रगटाये जो केवलज्ञान।
आठों कर्मों को जो नाशें, दिलवाये वो मोक्ष महान॥ चौबीसों..॥३५॥
ॐ ह्रीं शुक्लध्यानप्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१. मोक्ष, २. सीढ़ी।

(काव्य छंद)

मुनि को औषध दान जो करता भक्ति से ।
चरमोत्तम³ तन पाय मिलन करे मुक्ति से ॥
विजय पताका नाम इस विधान का सुन्दर ।
कर लें हम सब आज अवसर ये अति सुन्दर ॥36॥

ॐ ह्रीं औषधदान शक्ति प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

गुरु को शास्त्र प्रदान, स्वयं करें करवायें ।

बन कौंडेश समान, कुन्दकुन्द बन जायें ॥ विजय पताका...॥37॥

ॐ ह्रीं ज्ञानदानशक्तिप्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मुनि को दे आवास, अभयदान कर जायें ।

बन चक्रि² तीर्थेश³, जग का वैभव पाये ॥ विजय पताका...॥38॥

ॐ ह्रीं अभयदानशक्तिप्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पात्र⁴ दान में आन, चारों दान समायें ।

तीर्थकर भगवान, इसमें श्रेष्ठ कहायें ॥ विजय पताका...॥39॥

ॐ ह्रीं आहारदानशक्तिप्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(चौपाई)

हे जिनवर ! जो तुमको ध्याये, सत्य ज्ञान की आश लगाये ।

वो अनंतज्ञानी बन जाये, क्षायिक ज्ञानलब्धि को पाये ॥40॥

ॐ ह्रीं क्षायिक ज्ञानलब्धि प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जो नैनों में तुम्हें बसाये, प्रतिदिन प्रभु तुम दर्शन पाये ।

वो अनंत दर्शन गुण पाये, क्षायिक दर्शन को प्रगटाये ॥41॥

ॐ ह्रीं क्षायिक दर्शनलब्धि प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

1. अन्तिम और उत्तम शरीर, 2. चक्रवर्ती, 3. तीर्थकर, 4. आहारदान ।

चौबिस जिन के दर जो आये, प्रतिदिन दान करे करवाये।
क्षायिक दान लब्धि वो पाये, फिर अनंत दानी कहलाये॥42॥

ॐ ह्रीं क्षायिक दानलब्धि प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

जो जन लाभ मुनाफा पायें, दान धर्म में उसे लगाये।
वो अनंत लाभेश कहाये, क्षायिक लाभ लब्धि विकसाये॥43॥

ॐ ह्रीं क्षायिक लाभलब्धि प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

चउविध दान करें करवाये, सुंदर जिन मंदिर बनवाये।
वो अनंत भोगों को पायें, क्षायिक भोग लब्धि को पाये॥44॥

ॐ ह्रीं क्षायिक भोगलब्धि प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

चौबिस जिन के जो गुण गाये, बहुविध पूजा द्रव्य चढ़ाये।
वो उपभोग अनंतों पाये, अक्षय उपभोगज सुख पाये॥45॥

ॐ ह्रीं क्षायिक उपभोगलब्धि प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

जो गुरुसेवक औषधदानी, महा तपस्वी आगम ज्ञानी।
जिनपूजा में जो लग जाये, क्षायिक वीर्य वही प्रगटाये॥46॥

ॐ ह्रीं क्षायिक वीर्यलब्धि प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

जिनमत में जो चित्त लगाये, परमत जिसको रंच न भाये।
मोह विजेता वो बन जाये, क्षायिक सम्यग्दर्शन पाये॥47॥

ॐ ह्रीं क्षायिक सम्यक्त्वलब्धि प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

चौबिस जिन का जाप करें जो, राग-द्वेष परभाव तजे जो।
स्वयं असंयम को परिहारे, वो क्षायिक चारित्र सम्हारे॥48॥

ॐ ह्रीं क्षायिक चारित्रलब्धि प्रदायक श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (हरिगीता छंद)

यह मांडला बहु रंग वाला, दिव्य सुंदर सा बना।
पूर्णार्घ्य अर्पण कर प्रभु हो, पूर्ण सबकी कामना॥
हम सब विधान विजय पताका, विजय ध्वज लेकर करें।
जिनराज सम दुःख जीतकर, हम मुक्ति विजया को वरें॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (दोहा)

चौबीसों भगवान का, ध्यान रहे त्रयकाल।
जो पावे इनकी शरण, होवे माला माल॥
कोष्ठक अड़तालीस में, जो भी करें विधान।
ऋद्धि सिद्धी धन सौख्य पा, भक्त बने भगवान॥

ॐ ह्रीं अष्टचत्वारिंशद् दलकमलाधिपति श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य मंत्र - ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः मम सर्व सौख्यं
कुरु-कुरु स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा- विजय पताका को सजा, लेकर अर्घ्य विशाल।
चौबीसों भगवान की, पढ़ता हूँ जयमाल॥

(शेर छंद)

जय तीर्थनाथ तीर्थराज तीर्थ प्रदाता।
चौबीस नाथ तीर्थ पिता तीर्थ विधाता॥
त्रय लोक में महान् मध्य ढाई द्वीप है।
उनमें भी कर्मभूमि पाँच-दश¹ प्रदीप है॥1॥
सत्तर अधिक शतेक होती कर्म भूमियाँ।
तीर्थकरादि श्रेष्ठ रत्न की ये जननियाँ॥

1. पन्द्रह।

बत्तीस गुणित पाँच भूमियाँ विदेह हैं ।
जिसमें वरे सदा ही भव्य मोक्ष गेह¹ है॥2॥
भरतादि क्षेत्र और पाँच पाँच² ही कहे ।
जिसमें भी सदा धर्म मोक्षमार्ग ना रहे ॥
तीर्थकरादि होते यहाँ एक³ काल में ।
चौबीस मात्र ही बताये पूर्ण काल में॥3॥
तीर्थकरादि सर्व दिव्य आत्म को नमूँ ।
लेकर ध्वजा व अर्घ नाथ भक्ति में रमूँ॥
चौबीस ही जिनेश मेरे पाप नशाओ ।
सब कर्म शत्रुओं पे पूर्ण विजय कराओ॥4॥
जो भी यहाँ पे आके नित्य शीश झुकाता ।
माँगें बिना ही सर्व सम्पदायें कमाता ॥
पूजा तिहारी भक्त को भी पूज्य बनाये ।
जो हैं तुम्हारे भक्त उन्हें विजय दिलाये॥5॥
मैंने भी नाथ आज यहाँ ध्यान लगाया ।
उत्तम विजय पताका ये विधान रचाया ॥
हे नाथ ! कर्म शत्रुओं पे विजय दिलाओ ।
मुझ 'गुप्तिनंदी' को भी शीघ्र सिद्ध बनाओ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः जयमाला पूर्णाघ्र्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

नरेन्द्र छंद

जो ! भव्योत्तम विजय पताका नामक श्रेष्ठ विधान करें ।
आस्था रख चौबीसों जिन पर, क्षमा अर्चना दान करें ॥
श्रेष्ठ चंद्र सम सुयश वरें जो, प्रभु की महिमा फैलाये ।
त्रय 'गुप्ति' से जन्म धन्य कर, मुक्ति राजश्री वर लाये ॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

1. घर, 2. पाँच भरत, पाँच ऐरावत क्षेत्र, 3. एक मात्र चतुर्थ काल ।

विधान प्रशस्ति

(दोहा)

पाँचों परमेष्ठी भजूँ, करूँ शारदा ध्यान ।
वृषभादि वीरांत तक, चौबीसों भगवान ॥1॥
वीर प्रभु के तीर्थ में, आदि सिंधु आचार्य ।
महावीर कीर्ति गुरु, उनके पट्टाचार्य ॥2॥
उनके विस्तृत संघ में, अनगिन श्रमण महान ।
उनमें जग विख्यात हैं, कुंथु सूरि गुणखान ॥3॥
उनसे दीक्षित श्रमण में, गुप्तिनंदी आचार्य ।
मेरे श्रुत विद्या गुरु, कनकनंदी आचार्य ॥4॥
चौबीसों भगवान का, करने दिव्य बखान ।
विजय पताका नाम का, छोटा लिखा विधान ॥5॥
पच्चीस सौ अड़तीस शुभ, वीर वर्ष का साल ।
माघ कृष्ण चौदस तिथी, लायी स्वर्णिम काल ॥6॥
फाल्गुन कृष्ण सात को, ग्रंथ हुआ सम्पूर्ण ।
नाथ कृपा से हो विजय, करूँ कर्म को चूर्ण ॥7॥
जब तक रवि शशि लोक में, हो प्रभु का यशगान ।
पूजक सब दुःख जीतकर, बनें सिद्ध भगवान ॥8॥

इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री विजय पताका विधान की आरती नं. 1

रचनाकार : मुनि चन्द्रगुप्त

(तर्ज - जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा...)

जय विधान जय विधान जय विजय पताका।
आरती करे हैं हम मिले विजय पताका॥
चौबीसों जिनवरों का ये विधान प्यारा।
इस विधान से चमके भाग्य का सितारा॥
हमको आसरा हैं आप सम परम पिता का॥ आरती...
चौबीस दीप की ये चौबीस थाली।
चौबीस जिनवरों की आरती निराली॥
जय हो तीर्थनाथ श्री महापुरुष शलाका॥ आरती...
हे अनंत आप में अनंत गुण समाये।
आरती रचा गुणों की ज्योत हम जलायें॥
आप जिसके साथ उसका बाल हो न बाँका॥ आरती...
नाथ आप अंखियों में अंजन¹ के जैसे।
आपके बिना जियेंगे भक्त नाथ कैसे॥
आपके बिना है कौन आपकी प्रजा का॥ आरती...
सूरि गुप्तिनंदी इस विधान के सृजेता²।
इस विधान से बनेंगे भक्त कर्मजेता॥
'चन्द्रगुप्त' पायें नाथ संग शिवरमा का।
आरती करें हैं हम मिले विजय पताका॥ जय विधान...

1. काजल, 2. रचनाकार।

विजय पताका विधान की आरती नं. 2

रचनाकार : ग.आ. क्षमाश्री माताजी

(तर्ज - वीर भजले...)

आरती करलो प्रभु की आरती करलो-2

सजाकर-सजाकर ! सजाकर चमचम दीपक थाल,

प्रभु की आरती कर लो।

विजय पताका इस विधान की, महिमा अपरम्पार-2

मनोकामना पूर्ण हो, बढ़ता पुण्य अपार॥ सजाकर...॥1॥

जय-जय चौबीसों प्रभु, जय-जय श्री जिनराज-2

स्वर्ण रजत दीपक सजा, करो आरती आज॥ सजाकर...॥2॥

रोग-शोक दुःख दूर हों, होते नवग्रह शांत-2

भक्त विधि से नित करो, हरो क्लेश संताप॥ सजाकर...॥3॥

‘गुप्तिनन्दी’ गुरु ने रचा, महिमावान विधान-2

भक्ति की शक्ति महा, देते हैं जो ज्ञान॥ सजाकर...॥4॥

‘क्षमा’ करो प्रभु हम करें, पूजन भजन विधान-2

कर्म नाशकर हम प्रभो, पा जाये निर्वाण॥ सजाकर...॥5॥

श्री विजय पताका विधान की आरती नं. 3

रचनाकार : आर्यिका आस्थाश्री

(तर्ज - माईन माईन....)

चौबीसों जिनवर के द्वारे, मंगलदीप सजाये ।
विजय पताका श्री विधान की, आरती करने आये ॥
बोलो चौबीस की जय-2...

तीर्थकर चौबीस जिनेश्वर, धर्म ध्वजा फहरायें ।
धन वैभव को तज के स्वामी, मुक्ति रमा को पायें ॥
ढपली घुंघरू बाँसुरी लेकर, प्रभु की आरती गायें ॥
विजय पताका.....

सोने की थाली में दीपक, लगते चाँद सितारे ।
दिनकर भी चरणों में आकर, प्रभु का रूप निहारे ।
तन मन मेरा झूम-झूम कर, मनहर नृत्य रचाये ॥
विजय पताका.....

प्रभुवर तेरी यशोपताका, चहुँदिश में फहरायें ।
रंग-बिरंगी विजय ध्वजा हम, आरती के संग लायें ॥
मोक्ष लक्ष्मी का सुख पाने, 'आस्था' प्रभु को ध्याये ॥
विजय पताका.....

श्रुत स्कन्ध विधान श्रुत स्कन्ध व्रत विधि

भादो मास में भादो कृष्णा प्रतिपदा से लेकर आश्विन कृष्णा प्रतिपदा तक यह व्रत किया जाता है। इसमें एक महीने में उत्कृष्ट 16 उपवास, मध्यम 10 और जघन्य 8 उपवास करें। पारणा के दिन यथाशक्ति नीरस या एक-दो आदि रस छोड़कर एक बार भोजन (एकाशन) करें। 16 उपवास करने में प्रतिपदा से एक उपवास, एक पारणा ऐसे आश्विन कृ. प्रतिपदा तक 16 उपवास होंगे। ऐसे ही 10 उपवास में कृष्णपक्ष में दूज, पंचमी, अष्टमी, दशमी और चौदश तथा शुक्लपक्ष में भी 2, 5, 8, 10 और 14 उपवास करें। 8 उपवास में भी दो पंचमी, 2 अष्टमी और 2 चौदस ऐसे 8 उपवास करें। अथवा शक्ति अनुसार जैसे भी हो, वैसे ये उपवास करें।

प्रतिदिन जिनमंदिर में श्रुत स्कंध मंडल बनाकर श्रुत स्कंध विधान पूजन करें। इस व्रत में प्रतिदिन निम्न मंत्र का जाप्य करें :-

‘ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानेभ्यो नमः।’

यह व्रत बारह वर्ष तक करें अथवा पाँच वर्ष करें। व्रत पूर्ण कर उद्यापन करें। मंदिर में 12-12 उपकरण-घंटा, पूजा के बर्तन, छत्र, चंवर, चंदोवा, चौकी, वेष्टन आदि भेंट करें। शास्त्र छपाकर मंदिर में रखें और मुनि-आर्यिकाओं को तथा श्रावकों को भी शास्त्र भेंट करें। सरस्वती भवन का निर्माण कर श्रुतदेवी की प्रतिमा या श्रुतस्कंध यंत्र स्थापित करें। जिनवाणी के उपदेश आदि द्वारा जैनधर्म की प्रभावना करें। इस प्रकार इस व्रत के प्रभाव से भव्यों को श्रुतज्ञान की वृद्धि होती है और अगले भव में श्रुतकेवली होकर वे परम्परा से केवलज्ञान की प्राप्ति कर लेते हैं।

व्रत की कथा

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखंड में अंग देश में पटना नगर है। उस नगर के राजा चंद्ररुचि की चन्द्रप्रभा रानी के श्रुतशालिनी नाम की एक कन्या थी। इसे आर्यिका जिनमती के पास विद्याध्ययन के लिए रखा गया। थोड़े ही दिनों में वह

कन्या सर्वविद्या में निपूण हो गई। एक दिन श्रुतशालिनी ने एक चौकी पर श्रुत स्कंध मंडल बनाया। इसे देखकर आर्यिका जिनमती ने प्रसन्न होकर कन्या को विद्या में निष्णात समझकर राजा के यहाँ भेज दिया।

एक दिन उद्यान में पधारे वर्द्धमान मुनिराज की वंदना करके राजा ने पूछा-भगवन् ! मेरी कन्या को इतने गुण और सुन्दर रूप किस पुण्य से मिले हैं ? मुनिराज ने कहा- राजन् ! इसी जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह में पुष्कलावती देश में पुण्डरीकिणी नगरी है। वहाँ के राजा गुणभद्र और रानी गुणवती दोनों एक समय सपरिवार श्री सीमंधर भगवान की वंदना को गये। यथायोग्य भक्ति, पूजा करके मनुष्य के कोठे में बैठ गये। पुनः दिव्य उपदेश सुनने के बाद श्रुत स्कंध व्रत का स्वरूप पूछा-तब गणधर देव ने कहा-जिनेन्द्र देव की दिव्यध्वनि निरक्षरी वाणी है, यह अनंत भव्यों के हितार्थ होती है। भगवान की दिव्यध्वनि को वहाँ पर बैठे सभी भव्य अपनी-अपनी भाषा में समझ लते हैं। भगवान की वाणी सात सौ अठारह भाषा में खिरती है। इसे सुनकर चार ज्ञान के धारी गणधरदेव द्वादशांग रूप में गूँथ लेते हैं।

द्वादशांग के नाम- 1. आचारांग, 2. सूत्रकृतांग, 3. स्थानांग, 4. समवायांग, 5. व्याख्याप्रज्ञप्ति, 6. ज्ञातृकथांग, 7. उपासकाध्ययनांग, 8. अंतकृत् दशांग, 9. अनुत्तरौपपादिकदशांग, 10. प्रश्नव्याकरणांग, 11. सूत्रविपाकांग और 12. दृष्टिवादांग।

फिर इन्हीं के आधार से अनेक मुनिगण ग्रंथ रचना करते हैं। यह जिनेन्द्रवाणी समस्त लोक-अलोक के स्वरूप को और त्रिकालवर्ती पदार्थों को प्रदर्शित करने वाली है। समस्त प्राणियों का हित करने वाली है, मिथ्यामतों को दूरकर पूर्वापर विरोधी दोषों से रहित सच्चे धर्म का उपदेश देने वाली है।

अनेक प्रकार से उपदेश देकर श्रीगणधरदेव ने उन्हें श्रुत स्कंध व्रत की विधि बतलाई। राजा गुणभद्र और रानी गुणवती ने इस व्रत को वहीं समवशरण में गणधर गुरु से ग्रहण किया। पुनः विधिवत् इस व्रत को करके अंत में समाधिपूर्वक मरण कर अच्युत स्वर्ग में इन्द्र-इन्द्राणी हुए।

वहाँ से चयकर वह गुणवती रानी का जीव यहाँ तुम्हारी श्रुतशालिनी नाम की कन्या हुई है। इस प्रकार गुरुमुख से अपने भवांतर सुनकर उस कन्या ने पुनः श्रुत स्कन्ध व्रत धारण किया। पश्चात् चारित्र के प्रभाव से अंत में समाधिमरण कर स्त्रीलिंग छेदकर इन्द्रपद प्राप्त कर लिया।

कालांतर में इस श्रुतशालिनी के जीव पश्चिम विदेह के कुमुदवती देश के अशोक नगर में राजा पद्मनाभ की रानी जितपद्मा के 'नयंधर' नाम के तीर्थकर हुए हैं। ये कामदेव और चक्रवर्ती भी हुए हैं। नयंधर तीर्थकर जैनेश्वरी दीक्षा लेकर शुक्लध्यान के द्वारा कर्मों को नष्ट कर केवली हो गये, तब देवों ने समवशरण की रचना कर दी। इन्होंने अनेक देशों में विहार कर भव्य जीवों को धर्मावृत्त से तर्पित कर अंत में अघाति कर्मों का नाश करके मोक्षपद प्राप्त कर लिया है। इस प्रकार जो नर-नारी भावसहित इस व्रत का पालन करेंगे, वे अवश्य ही श्रुतज्ञान को पूर्ण कर केवलज्ञान को प्राप्त करेंगे।

साभार-श्रुत स्कन्ध विधान
लेखिका-गणिनी प्रमुख आर्यिका ज्ञानमति माताजी

श्रुत स्कन्ध विधान क्यों करें ?

- (1) यदि आपको या आपके संबंधी को पढ़ने में अरुचि हो।
- (2) पढ़ाई में मन नहीं लगता हो या पढ़ने में कमजोर हो।
- (3) बहुत याद करने पर भी याद नहीं होता हो या याद करके भूल जाते हों।
- (4) परिश्रम करके भी परीक्षा में अच्छे नम्बर नहीं आते हों।
- (5) अच्छे समय में या काम के समय में बुद्धि काम नहीं करती हो।
इत्यादि ज्ञानावरण कर्म के निवारण हेतु एवं निरन्तर ज्ञान की वृद्धि हेतु वर्ष में कम से कम दो बार श्री श्रुत स्कन्ध विधान करें।

ज्ञान पचीसी व्रत विधि

ज्ञान पचीसी व्रत में ग्यारस के ग्यारह उपवास और चौदश के चौदह उपवास ऐसे कुल पच्चीस व्रत होते हैं। यह व्रत ग्यारह अंग और चौदह पूर्वरूप ज्ञान की आराधना के लिए किया जाता है। इसको श्रावण सुदी चतुर्दशी से करने का विधान है।

मतांतर से इस व्रत में दशमी के दश उपवास और पूर्णिमा के पन्द्रह उपवास करने का भी विधान है।

इस व्रत में प्रधान रूप से श्रुत स्कन्ध यंत्र का अभिषेक एवं श्रुतज्ञान (सरस्वती) की पूजा करना चाहिए।

प्रत्येक व्रत की उत्तम विधि तो उपवास ही है। मध्यम एवं जघन्य विधि में शक्ति के अनुसार अल्पाहार या एकाशन करके भी व्रत किया जा सकता है। व्रत के दिन जिनेन्द्र देव एवं श्रुतस्कन्ध यंत्र अथवा सरस्वती की मूर्ति का पंचामृत अभिषेक करके पूजा करें, पुनः सरस्वती के 108 नाम को पढ़ते हुए एक-एक मंत्रों का उच्चारण कर सुगंधित पुष्प, लवंग या पीले चावलों को चढ़ावे। अनंतर समुच्चय मंत्र से एक जाप्य करें।

समुच्चय जाप्य-ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगाय नमः।

ग्यारह अंग और चौदह पूर्व संबंधी व्रतों में पृथक्-पृथक् जाप्य भी करना चाहिए।

ग्यारह अंग की 11 जाप्य-

1. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-आचारांगाय नमः।
2. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-सूत्रकृतांगाय नमः।
3. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-स्थानांगाय नमः।
4. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-समवायांगाय नमः।
5. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-व्याख्याप्रज्ञप्तिअंगाय नमः।
6. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-ज्ञातृधर्मकथांगाय नमः।
7. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-उपासकाध्ययनांगाय नमः।

8. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-अंतकृत्तदशांगाय नमः।
9. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-अनुत्तरोपपादिकदशांगाय नमः।
10. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-प्रश्नव्याकरणांगाय नमः।
11. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-विपाकसूत्रांगाय नमः।

चौदह पूर्वो की 14 जाप्य -

1. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-उत्पादपूर्वाय नमः।
2. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-अग्रायणीयपूर्वाय नमः।
3. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-वीर्यानुप्रवादपूर्वाय नमः।
4. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वाय नमः।
5. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-ज्ञानप्रवादपूर्वाय नमः।
6. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-सत्यप्रवादपूर्वाय नमः।
7. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-आत्मप्रवादपूर्वाय नमः।
8. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-कर्मप्रवादपूर्वाय नमः।
9. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-प्रत्याख्यानपूर्वाय नमः।
10. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-विद्यानुप्रवादपूर्वाय नमः।
11. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-कल्याणप्रवादपूर्वाय नमः।
12. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-प्राणावायप्रवादपूर्वाय नमः।
13. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-क्रियाविशालपूर्वाय नमः।
14. ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत-लोकबिन्दुसारपूर्वाय नमः।

इस व्रत के 25 उपवास एक वर्ष में करें। ऐसे एक वर्ष तक या बारह¹ वर्ष तक भी यह व्रत किया जाता है। व्रत पूर्ण करके यथाशक्ति उद्यापन करना चाहिए।

इस व्रत के प्रसाद से मनुष्य श्रुतज्ञान को प्राप्त कर अगले भव में श्रुतकेवली होकर परम्परा से केवलज्ञान को प्राप्त करने में समर्थ हो जावेगा।

साभार-श्रुत स्कन्ध विधान

लेखिका-गणिनी प्रमुख आर्यिका ज्ञानमति माताजी

1. "व्रततिथिनिर्णय" पृ. 214, 216

श्री श्रुत स्कन्ध विधान

स्थापना (मत्तयगन्द छंद)

श्री जिन भाषित श्री गुरु गुंथित द्वादश अंग महा जिनवाणी ।

श्री श्रुत खन्ध हरे भव फंद वरें मुनिवृंद बनें श्रुत ज्ञानी ॥

हे कमलासिनि ! हंसनिवासिनी ! चित्त मूयर बसो जिनवाणी ।

श्री श्रुतस्कन्ध विधान रचा हम आज करें श्रुत की अगवानी ॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कन्ध ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अष्टक (मत्तगयंद छंद)

(तर्ज : वीर हिमाचल.....)

द्वादश अंगमयी श्रुत के हित द्वादश मंगल कुंभ सजायें ।

श्री श्रुतज्ञान महोदधि को हम क्षीर महोदधि नीर चढ़ायें ॥

द्वादश अंग व भंग तरंगिणि श्री श्रुत गंग महासुख दानी ।

पार करो भव पार करो अब हे ! जननी जयश्री जिनवाणी ॥१॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कंधाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री श्रुत गंध जहाँ महके सब पाप कुगंध वहाँ मिट जाये ।

गंध चढ़ा श्रुत गंग नदी पर बंधन कर्मन् के कट जायें ॥ द्वादश.. ॥२॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कंधाय भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यक् दर्शन ज्ञान व सम्यक् चारित का श्रुत ज्ञान पिटारा ।

अक्षत रत्न चढ़ा हम भी वर लें वह सम्यक् रत्न पिटारा ॥ द्वादश.. ॥३॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कंधाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

हे कमलासिनि मात ! तुझे कमलादिक पुष्प चढ़ा हम नाचें।
हाथ सदा सिर पे तुमरा फिर काम बला सिर पे नहीं नाचें॥
द्वादश अंग व भंग तरंगिणि श्री श्रुत गंग महासुख दानी।
पार करो भव पार करो अब हे ! जननी जयश्री जिनवाणी॥४॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्ह श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कंधाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति
स्वाहा।

रोग कुर्योग वियोग हरे नित चार महा अनुयोग हमारे।
छप्पन-छप्पन भोग चढ़ाकर शीघ्र बने शिवयोग हमारे॥ द्वादश..॥५॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्ह श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कंधाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

ग्यारह अंग व चौदह पूरब चौदहवाँ गुणथान दिलाये।
ग्यारह-ग्यारह थाल सजा हम चौदह-चौदह दीप जलायें॥ द्वादश..॥६॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्ह श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कंधाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं
निर्वपामीति स्वाहा।

तू तरणी जननी जग की हम बालक हैं तव राजदुलारे।
धूप चढ़ा शिव भूप बनें हम हे वरदा ! वर दे यह न्यारे॥ द्वादश..॥७॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्ह श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कंधाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षर मंत्र कला प्रतिभा मति बुद्धि प्रदायक हे जगमाता !।
मोक्ष महाफल दो हमको फल से भजते तुमको हम माता॥ द्वादश..॥८॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्ह श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कंधाय महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति
स्वाहा।

हे गजगामिनि ! पद्मनिवासिनि सौख्य प्रदायिनि हे श्रुतदेवी !।
अर्घ्य समर्पित है तुमको श्रुतज्ञान विशारद शारद देवी॥ द्वादश..॥९॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्ह श्री जिनमुखोद्भूत श्रुतस्कंधाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

(गीता छंद)

श्रुत गंग के हर अंग को, हम शांतिधारा से भजें।
पुष्पांजलि करके सदा, हम ज्ञान पुष्पों से सजें॥
माँ शारदे भव तारदे, श्रुतज्ञान का भण्डार दे।
अरिहंत की माता हमें, अरिहंत पद उपहार दे॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्रुत स्कन्ध के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

बारह अंगों के अर्घ (दोहा)

प्रथम अंग आचार है, जिसमें श्रमणाचार।

पद संख्या अठ दस सहस्र, मोक्ष महल का द्वार॥1॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री अष्टादशसहस्रपदसंयुक्त आचारांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजे सूत्र कृतांग में, पद छत्तीस हजार।

जिसमें मिलता भव्य को, स्वपर समय का सार॥2॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्त सूत्रकृतांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवादिक षट् द्रव्य के, भेद अनेक प्रकार।

वर्णन इस थानांग में, पद ब्यालीस हजार॥3॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्विचत्वारिंशद्सहस्रपदसंयुक्त स्थानांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक लाख चौंसठ सहस्र, पदयुत समवायांग।

षट् द्रव्यों की तुल्यता, कहता चौथा अंग॥4॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री एकलक्षचतुषष्टिसहस्रपदसंयुक्त समवायांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधरादि के प्रश्न का, उत्तर युत विस्तार।

व्याख्या प्रज्ञप्ति करें, वर्णन विविध प्रकार॥5॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्वयलक्ष अष्टाविंशतिसहस्रपदसंयुक्त व्याख्या प्रज्ञप्त्यंगाय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

सहजकथा जिनधर्म की, कहता ज्ञातृ कथांग।

अमृत बोधिक प्रेरणा, देता छठवां अंग॥6॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री पंचलक्षषट्पंचाशतसहस्रपदसंयुक्त ज्ञातृधर्मकथांगाय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

उपासकाध्ययनांग में, श्रावक के व्रत आदि।

करो अर्चना भाव से, देवे बोधि समाधि॥7॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री एकादशलक्षसप्ततिसहस्रपदसंयुक्त उपासकाध्ययनांगाय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

हर तीर्थकर तीर्थ में, दश अंतकृतः मान।

अंतकृतः दश अंग, उनका पूर्ण बखान॥8॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री त्रयोविंशतिलक्षाष्टाविंशतिसहस्रपदसंयुक्त अंतकृत-दशांगाय नमः
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश यति हर तीर्थेश के, स्वर्ग अनुत्तर पाय।

‘अनुत्तरोपपादिक’ महा उनका त्याग सुनाय॥9॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्वानवतिलक्षाःचतुचत्वारिंशद्सहस्रपदसंयुक्त अनुत्तरोपपादिकदशांगाय
नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रश्न व्याकरण अंग से, होता आत्मप्रकाश।

आक्षेपिणी आदिक कथा, करती ज्ञान विकास॥10॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री त्रिनवतिलक्षाःषोडशसहस्राणिपदसंयुक्त प्रश्नव्याकरणांगाय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म दशा फल को कहे, यह विपाक सूत्रांग।

श्रुत पद की कर अर्चना, वर एकादश अंग॥11॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री कोटिचतुरशीतिलक्षाःपदसंयुक्त विपाकसूत्रांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

इक सौ आठ करोड़ वा, अड़सठ लख पद धार।

दृष्टि प्रवाद जिनेश गत, होता पंच प्रकार॥12॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री अष्टोत्तरशतःकोटि, अष्टाषड्लक्षाः षड्पंचाशत्सहस्रपदसंयुक्त
दृष्टिप्रवादांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँच भेद परिकर्म के, चन्द्र प्रज्ञप्ति आदि।

उसके सम्यग्ज्ञान से, हरे जगत की व्याधि॥13॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री षट् त्रिंशल्लक्ष पंच सहस्र पद संयुक्त चन्द्र प्रज्ञप्तये नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

भास्करेन्द्र के पूर्ण गुण, गमन ऋद्धि परिवार।

सूर्य प्रज्ञप्ति में मिले, वर्णन सर्व प्रकार॥14॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री पंचलक्ष त्रि-सहस्र पद संयुक्त सूर्य प्रज्ञप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति में, जम्बूद्वीप का ज्ञान।

इसके सम्यक् बोध से, मिटे लोभ वा मान॥15॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री त्रयलक्ष पंचविंशति सहस्र पद संयुक्त जम्बूद्वीप प्रज्ञप्तये नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीप सिन्धु प्रज्ञप्ति में, द्वीपोदधि का बोध।

हम इसकी अर्चा करें, करने कर्म निरोध॥16॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्विपंचाशल्लक्ष षट् त्रिंशत सहस्र पद संयुक्त द्वीपसागर प्रज्ञप्तये नमः
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण पर्यायों द्रव्य का, जिसमें हो प्रतिरूप।

वह व्याख्या प्रज्ञप्ति है, वर्णन करे अनूप॥17॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री चतुरशीति लक्ष षट्त्रिंशत सहस्र पद संयुक्त व्याख्या प्रज्ञप्तये नमः
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

दृष्टिवाद का भेद कहाया, सूत्र नाम आगम में आया।

सिद्ध जीव का रूप बताये, इसको हम सब अर्घ्य चढ़ायें॥18॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री अष्टाशीति लक्षपद संयुक्त दृष्टिवाद भेदसूत्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुष शलाका त्रेसठ होवे, पुण्य पाप की बगिया बोवे।

उसे प्रथम अनुयोग बताये, हम सब उसको अर्घ चढ़ायें॥19॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री पंच सहस्र पद संयुक्त दृष्टिवाद भेद प्रथमानुयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदह पूर्व के अर्घ (दोहा)

जीवादिक षट्द्रव्य औ, उनके गुण पर्याय।

प्रथम पूर्व उत्पाद में, जिनवर हमें बताय॥20॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री कोटिपदसंयुक्त उत्पादप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त तत्त्व नव अर्थ हैं, जिसमें क्रम अनुसार।

आग्रायणीय पूर्व से, होता भ्रम परिहार॥21॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री षण्णवतिलक्षः पदसंयुक्त आग्रायणीप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत वीर्यानुप्रवाद में, वीरों का पुरुषार्थ।

प्रबल पराक्रम के धनी, पायें निज परमार्थ॥22॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री सप्ततिलक्षः पदसंयुक्त वीर्यानुप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्ति नास्ति का ज्ञान दे, अस्ति नास्ति प्रवाद।

मिटते इससे जगत के, सारे वाद विवाद॥23॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री षष्टिपदलक्षः पदसंयुक्त अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँच तरह के ज्ञान को, कहता ज्ञान प्रवाद।

इसकी अर्चा से मिटे, जीवों के अवसाद¹॥24॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री एकोनपदकोटिपदसंयुक्त ज्ञानप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. दुःख।

छठवें सत्य प्रवाद में, सत्य धरम का रूप।

जो इसकी पूजा करे, बन जाता शिवभूष॥25॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री पंचकोटिकषट्पद संयुक्त सत्यप्रवाद पूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम आत्म प्रवाद में, जीवों के अधिकार।

इसको पढ़ भविजन बने, निजानंद अविकार॥26॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री षट्विंशतिकोटिपदसंयुक्त आत्मप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो जैसी करनी करें, वैसा हो परिणाम।

अष्टम कर्म प्रवाद पढ़, बनो स्वयं अभिराम॥27॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री अशीतिपदलक्षैकपदकोटि पदसंयुक्त कर्मप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्याख्यान प्रवाद पा, कर लो प्रत्याख्यान।

प्रत्याख्यानी को मिले, अंतिम मोक्ष महान॥28॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री चतुरशीतिलक्षःपदसंयुक्त प्रत्याख्यानप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस विद्यानुप्रवाद में, सब विद्या का ज्ञान।

श्रद्धा से अर्चा करो, पाओ सम्यक्ज्ञान॥29॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री कोटिदशलक्षःपदसंयुक्त विद्यानुप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्भादिक् कल्याण का, जो देता है ज्ञान।

उस कल्याण प्रवाद का, कर लो भविजन ध्यान॥30॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री षट्विंशतिकोटिपदसंयुक्त कल्याणप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैद्यकर्म मंत्रादि का, है जिसमें भण्डार।

इस प्राणानुप्रवाद से, होता जग उपकार॥31॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री त्रयोदशकोटिपदसंयुक्त प्राणानुप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रिया विशाल प्रवाद में, शिल्प कला का बोध।

छन्द शास्त्र व्याकरण से, हो निज का संबोध॥32॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री नवकोटिपदसंयुक्त क्रियाविशालप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक का सार है, मुक्ति धाम अविराम।

लोकबिन्दु श्रुत सार से, पाओ पद निष्काम॥33॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्वादशकोटिपंचाशत्लक्षःपदसंयुक्त लोकबिन्दुसारप्रवादपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

नीर यंत्र गति मंत्र, कहती जलगत चूलिका।

दृष्टिवाद का भेद, उसकी हम अर्चा करें॥34॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्वयकोटि नवलक्ष अष्टानवति सहस्र द्वयशत पद संयुक्त जलगता चूलिकायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु कुलाचल वर्ष¹, कहे भूमिगत चूलिका।

इनके वाचक मंत्र, उसकी हम अर्चा करें॥35॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्वयकोटि नवलक्ष अष्टानवति सहस्र द्वयशत पद संयुक्त स्थलगता चूलिकायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रजाल के मंत्र, बतलाती मायागता²।

कर्म कपट जय हेत, हम उसकी अर्चा करें॥36॥

1. क्षेत्र, 2. मायागता चूलिका।

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्वयकोटि नवलक्ष अष्टानवति सहस्र द्वयशत पद संयुक्त मायागता चूलिकायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नर गज आदिक रूप, तप मंत्रों से शक्य है।

रूपगता श्रुत पूर्ण, हम उसकी अर्चा करें॥37॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्वयकोटि नवलक्ष अष्टानवति सहस्र द्वयशत पद संयुक्त रूपगता चूलिकायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभ गमनादिक मंत्र कहे, चूलिका नभगता ।

दृष्टिवाद का अंग, हम उसकी अर्चा करें॥३८॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री द्वयकोटि नवलक्ष अष्टानवति सहस्र द्वयशत पद संयुक्त आकाशगता
चूलिकायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चौदह प्रकीर्णक के अर्घ
(पीठिका दोहा)

अंग बाह्य में निहित है, चौदह ग्रन्थ विशेष ।

इन्हें प्रकीर्णक भी कहें, श्री जिनवर तीर्थेश॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(सोरठा)

सामायिक के सूत्र, सदा हमें जिससे मिले ।

वह सामायिक ग्रन्थ, उसकी हम अर्चा करें॥३९॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य सामायिक प्रकीर्णक श्रुताय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

तीर्थकर चौबीस, उनका संस्तव अर्चन ।

वह जिन संस्तव ग्रन्थ, उसकी हम अर्चा करें॥४०॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य चतुर्विंशति स्तव प्रकीर्णक श्रुताय नमः
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

इक तीर्थकर देव, या इक जिन को वन्दन ।

कहे वन्दना ग्रन्थ, उसकी हम अर्चा करें॥४१॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य वन्दना प्रकीर्णक श्रुताय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतिक्रमण के भेद, करे सरल जो वर्णन ।

वह है चौथा ग्रन्थ, उसकी हम अर्चा करें॥४२॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य प्रतिक्रमण प्रकीर्णक श्रुताय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

(दोहा)

जिसमें पाँचों विनय का, वर्णन है मनहार।

विनय नाम उस ग्रन्थ को, पूजें हम बहुबार॥43॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य वैनयिक प्रकीर्णक श्रुताय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

तीन शिरोनति आदि का, जिसमें विशद बखान।

वह कृतिकर्म सुग्रन्थ है, उसका करें विधान॥44॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य कृतिकर्म प्रकीर्णक श्रुताय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

दश वैकालिक ग्रन्थ में, वर्णित श्रमणाचार।

उसको हम बहु द्रव्य ले, पूजें विविध प्रकार॥45॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य दशवैकालिक प्रकीर्णक श्रुताय नमः
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिषह वा उपसर्ग का, जिसमें पूर्ण बखान।

उत्तराध्ययन सुग्रन्थ वह, हम पूजें धर ध्यान॥46॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य उत्तराध्ययन प्रकीर्णक श्रुताय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

ग्रन्थ कल्प्यव्यवहार में, प्रायश्चित्त विधान।

हरे श्रमण के दोष वो, हम पूजें धर ध्यान॥47॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य कल्प्यव्यवहार प्रकीर्णक श्रुताय नमः
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि के योग्य अयोग्य का, द्रव्यादिक¹ अनुसार।

कल्प्याकल्प्य सुग्रन्थ वह, पूजें हम त्रय बार॥48॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य कल्प्याकल्प्य प्रकीर्णक श्रुताय नमः
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के अनुसार।

दीक्षा से प्राणांत तक, मुनियों के छह काल¹।

महाकल्प्य वर्णन करे, पूजें हम त्रय काल॥49॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य महाकल्प्य प्रकीर्णक श्रुताय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

चउविध इन्द्रों का विभव, वाहन सुख परिवार।

पुण्डरीक श्रुत में मिले, अर्चें हम बहुबार॥50॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य पुण्डरीक प्रकीर्णक श्रुताय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

देवों के उपपाद को, कहे महापुण्डरीक।

उसकी हम अर्चा करें, पायें उत्तम सीख॥51॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य महापुण्डरीक प्रकीर्णक श्रुताय नमः
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषिगण के बहु भेद वा, प्रायश्चित्त विधान।

निषिद्धका श्रुत में मिले, उसका करें विधान॥52॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्यस्य निषिद्धका प्रकीर्णक श्रुताय नमः अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (गीता छंद)

श्रुत वृक्ष की मनभावनी, शाखा अनेक सुहावनी।

पूर्णार्घ्य ले हम गा रहे, संगीतमय श्रुत लावनी॥

माँ शारदे भव तारदे, श्रुतज्ञान का भण्डार दे।

अरिहंत की माता हमें, अरिहंत पद उपहार दे॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत अंगबाह्य अंगप्रविष्ट द्वयनेक द्वादशांग श्रुतस्कंधाय
नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. दीक्षा, शिक्षा, संघ, गणपोषण स्वसंस्कार उत्तमार्थ सल्लेखना।

(गीता छंद)

श्रुत गंग के हर अंग को, हम शांतिधारा से भजें।
पुष्पांजलि करके सदा, हम ज्ञान पुष्पों से सजें॥
माँ शारदे भव तारदे, श्रुतज्ञान का भण्डार दे।
अरिहंत की माता हमें, अरिहंत पद उपहार दे॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : (1) ॐ ह्रीं ऐं बहुश्रुताय नमः। (2) ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री
जिनमुखोद्भूत द्वादशांग श्रुतस्कंधाय नमः। मम विद्या सिद्धीं कुरु-कुरु
स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा : जिनमुख भाषित शारदा, गणधर गुंथित अंग।
उनकी जयमाला पढ़ें, पाने ज्ञान अभंग॥

(शेर छंद)

तीर्थकरों की वचन गंग को प्रणाम हो।
गणनाथ रचित श्रुत तरंग को प्रणाम हो॥
आचार्य कथित सप्त भंग को प्रणाम हो।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो॥1॥

सामान्य केवली के वचन को प्रणाम हो।
उपसर्ग केवली के वचन को प्रणाम हो॥
अनुबद्ध केवली के वचन को प्रणाम हो।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो॥2॥

पूर्वापराविरुद्ध वाक्य को प्रणाम हो।
जिन अर्द्धमागधी सुभाष्य को प्रणाम हो॥
लघु भाष वा महान् भाष को प्रणाम हो।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो॥3॥

श्रुत केवली के पादमूल को प्रणाम हो ।
श्रुत अंगधारी सर्व सूरि को प्रणाम हो ॥
सिद्धांत पारगामी साधु को प्रणाम हो ।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो ॥4॥

आचार आदि सर्व अंग को प्रणाम हो ।
अंगांगबाह्य वा प्रविष्ट को प्रणाम हो ॥
शुभ पूर्वगत व चूलिकादि को प्रणाम हो ।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो ॥5॥

प्रथमानुयोग को त्रियोग से प्रणाम हो ।
करणानुयोग को सुयोग हित प्रणाम हो ॥
शुभ द्रव्य व चरणानुयोग को प्रणाम हो ।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो ॥6॥

षट् खंडमयी ज्येष्ठ ग्रंथ को प्रणाम हो ।
धवलादि सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ को प्रणाम हो ॥
क्षपणा व लब्धिसार ग्रन्थ को प्रणाम हो ।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो ॥7॥

श्री गंधहस्ति महाभाष्य को प्रणाम हो ।
श्री जीवकाण्ड कर्मकाण्ड को प्रणाम हो ॥
श्री समयसार आदि ग्रन्थ को प्रणाम हो ।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो ॥8॥

आदि पुराण ग्रन्थराज को प्रणाम हो ।
जगख्यात श्री पदमपुराण को प्रणाम हो ॥
हरिवंश वा उत्तर पुराण को प्रणाम हो ।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो ॥9॥

जिनशास्त्र के समस्त स्वरों को प्रणाम हो।
पद वाक्य बीज मंत्र छंद को प्रणाम हो॥
त्रैलोक्य पूज्य शब्द ब्रह्म को प्रणाम हो।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो॥10॥

श्रुत ज्ञान को श्रुतार्थ प्राप्ति हित प्रणाम हो।
कैवल्य ज्ञान प्राप्ति हेतु भी प्रणाम हो॥
विद्या कला व बुद्धि प्राप्ति हित प्रणाम हो।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो॥11॥

व्रत प्राप्ति हेतु द्वादशांग को प्रणाम हो।
शिवराज हेतु द्वादशांग को प्रणाम हो॥
त्रय गुप्ति हेतु 'गुप्तिनंदी' का प्रणाम हो।
श्रुतवृक्ष रूप द्वादशांग को प्रणाम हो॥12॥

ॐ ह्रीं ऐं अर्हं श्री जिनमुखोद्भूत द्वादशांग श्रुतस्कंधाय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- पाँचों सम्यग्ज्ञान में दूजा है श्रुतज्ञान।
उनके ग्यारह अंग वा चौदह पूर्व महान्॥1॥
ऐसे ही श्रुत ज्ञान का करके पूर्ण विधान।
पुष्पाञ्जलि हम कर रहे पाने केवल ज्ञान॥2॥
'गुप्तिनंदी' को भी मिले क्षायिक केवल ज्ञान।
पूजक इस श्रुत भक्ति से पावे मोक्ष महान्॥3॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

प्रशस्ति

दोहा

वंदूँ श्री चौबीस जिन, वंदू गणधर देव ।
परमेष्ठी जिन पाँच को, वन्दन करूँ सदैव ॥1॥
मात शारदा को नमूँ, श्रुत लेखक आचार्य ।
सब निर्ग्रन्थाचार्य वा, कुन्दकुन्द आचार्य ॥2॥
जैन दिगम्बर सूरि की, परम्परा अविराम ।
महावीरकीर्ति गुरु, हैं उनमें अभिराम ॥3॥
उनके शिष्यों में सरल, कुन्थुसागराचार्य ।
वे मेरे दीक्षा गुरु, जग प्रसिद्ध आचार्य ॥4॥
गुरुवर से दीक्षित शतक, श्रमण विविध आचार्य ।
उनमें हैं सबसे प्रथम, कनकनंदी आचार्य ॥5॥
वे मेरे शिक्षा गुरु, वैज्ञानिक आचार्य ।
दोनों गुरु का शिष्य मैं, गुप्तिनंदी आचार्य ॥6॥
मात शारदा की हुई, मुझ पर कृपा महान ।
उसके वश मैं लिख सका, विविध मनोज्ञ विधान ॥7॥
विद्या देवी पर लिखा, विद्या प्राप्ति विधान ।
ये दूजा लघु रूप में, श्रुतस्कंध सुविधान ॥8॥
सुयशगुप्त मुनिराज का, इसमें उत्तम योग ।
चन्द्रगुप्त मुनिराज का, मिला पूर्ण सहयोग ॥9॥
मात राजश्री ने किया, सम्पादन का कार्य ।
क्षमा व आस्था आर्यिका, सहयोगी अनिवार्य ॥10॥
रत्नत्रय सुविधान सम, है इसका इतिहास ।
इसकी भक्ति से मिले, केवलज्ञान प्रकाश ॥11॥
जब तक रवि शशि लोक में, रहे सदा यह ग्रन्थ ।
इसको भज हर भव्य जन, पावे मोक्ष सुपंथ ॥12॥

॥ इति प्रशस्तिः ॥

श्री सरस्वती माता की आरती

रचना : मुनि सुयशगुप्त

ॐ जय जिनवाणी माँ, मैय्या जय जिनवाणी माँ
आरती करते सब मिल-2, पाने मुक्ति रमा ॥

ॐ जय जिनवाणी माँ...

श्री जिनमुख से प्रकटी मैया, द्वादशांग वाणी।
सरस्वती श्रुतदेवी-2, माँ तुम ब्रह्माणी ॥1॥

ॐ जय जिनवाणी माँ...

चार भुजायें तेरी मैय्या, बांटे सुख मेवा।
गणधर मुनि आर्याएँ-2, करते तव सेवा ॥2॥

ॐ जय जिनवाणी माँ...

कर में अपने दीप लिये हम, नृत्य करें भारी।
सर्व अमंगल हरती-2, हो मंगलकारी ॥3॥

ॐ जय जिनवाणी माँ...

जो तेरे गुण गाता माता, वो शिव सुख पाता।
अल्पबुद्धि अज्ञानी-2, ज्ञानी बन जाता ॥4॥

ॐ जय जिनवाणी माँ...

मंगल द्रव्य चढ़े तुम द्वारे, मंगल वाद्य बजे।
सोलह शृंगारों से-2, प्रतिमा रोज सजे ॥5॥

ॐ जय जिनवाणी माँ...

शोध बोध कर बनें निरंजन, पूर्ण बोधि पायें।
श्रमण 'सुयश' भक्ति से, श्रुत-कीर्ति गाये ॥6॥

ॐ जय जिनवाणी माँ...

आरती

रचना : मुनि चन्द्रगुप्त

(तर्ज : जय-जय जगदंबे काली..)

मैया जिनवाणी प्यारी-प्यारी, जिनवर की वाणी प्यारी।
आरतियाँ गाऊँ तेरी भारती। हो मैया....

जन्मदायिनी माता से भी बड़ी शारदा माता। बड़ी...
जन्म दिया औरों ने पर तू जन्म सुधारे माता॥ जन्म...
माँ तुझको मात बनाऊँ, तेरा बेटा बन जाऊँ॥ आरतियाँ...
हंसवाहिनी मयूरवाहिनी ज्ञानदायिनी माता। ज्ञान...
तीर्थकर मुखकमल वासिनी तीर्थकर की माता॥ तीर्थकर...
चम-चम-चम दीप जलाऊँ, छम-छम-छम नृत्य रचाऊँ॥ आरतियाँ...
मयूरवाहिनी तुझे देखकर मन मयूर नाचे हैं। मन...
सा रे गा मा प ध नी सा सातों सुर बाजे हैं॥ सातों...
ता थई-थई थैया-थैया, नाचूँ गाऊँ मैं मैया॥ आरतियाँ...
श्री विद्या प्राप्ति विधान से, मैया विद्या देना। मैया...
'चंद्रगुप्त' को गुप्तित्रय की, सुंदर विद्या देना॥ सुंदर...
मैया की छैया पाऊँ, भव की नैया तिर जाऊँ॥
आरतियाँ गाऊँ तेरी भारती हो मैया...

आरती

रचना : आर्यिका आस्थाश्री

(तर्ज- मेरा मन डोले....)

जय जिनवाणी, जग कल्याणी, हम करे आरती भारती
जय सरस्वती जग मैया की...

1. अर्हंतों के मुख से प्रगटी, द्वादशांग जिनवाणी
कर में वीणा हंसवाहिनी, तू जग की कल्याणी....2 ओ मैया तू...
ऋषि मुनि ध्याये, सुर नर गाये, तू ही माँ भव से तारती
जय सरस्वती....
2. वरद हस्त हम सबके सिर रख, वरदा माँ वरदानी।
लाल तेरा अज्ञानी हूँ मैं, मुझे बनादो ज्ञानी....2 ओ मैया मुझे....
सरगम बाजे, झूमे नाचे, तू दुःख से हमें उबारती
जय सरस्वती....
3. मुख पे मेरे नाम सदा हो, सरस्वती माँ तेरा।
वाणी माँ ऐसी वाणी दो, काटूँ भव का फेरा....2 ओ मैया काटूँ....
गुमिसूरी, काटे दूरी, 'आस्था' भी उर में धारती....
जय सरस्वती....

अर्घावली

श्री शांतिनाथ भगवान (शंभु छंद)

तुम मोक्ष महाप्रद सुखकारी हो शांतिनाथ शांतिकारी।
आठों द्रव्यों को साथ चढ़ा बन जाये हम भी अविकारी॥
तीर्थकर चक्री कामदेव हो तीन पदों के तुम धारी।
प्रभुवर की पूजा करने से मिट जाती भव की बीमारी॥

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चौबीस तीर्थकर (अडिल्ल छंद)

जल फल आदि अर्घ बनाऊँ भाव से।
पद अनर्घ हित भक्ति रचाऊँ चाव से॥
जिन शासन का चक्र प्रवर्त्तन कर रहे।
चौबीसों जिनवर भव संकट हर रहे॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरपर्यंत चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवाणी माता (चामर छंद)

नीर गंध वस्त्र आदि अर्घ भाव से लिया।
आपका विधान मात भक्ति भाव से किया॥
दिव्य देशना महान है जिनेश आपकी।
मात अर्चना हरे प्रवंचना विभाव की॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीवाग्वादिनीभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री गणाधिपति गणधर भगवान का अर्घ

कर्म अष्ट से लड़ने हेतु वेष दिगम्बर धार लिया।
क्षायिक पद की अभिलाषा से कर्म अरि पर वार किया॥
जल फल आदि आठ द्रव्य से करता प्रभु का अभिनंदन।
मुनिगण के स्वामी हैं गणधर उनका मैं करता अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वगणधर परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री तीन कम नवकोटि मुनिराज (शंभु छंद)

जल, चंदन, अक्षत, दीप, धूप, नैवेद्य, हरित फल लाया हूँ।
अन्तर में भक्तिभाव लिये ऋषिराज शरण में आया हूँ॥
नवकोटि न्यून त्रय मुनियों को मैं वंदन बारम्बार करूँ।
बन जाऊँ मुनिमन सम निर्मल यह शुद्ध भावना हृदय धरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री अढ़ाई द्वीपस्थ न्यून त्रय नवकोटि श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग. गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी (शेर छंद)

आचार्य कुं थु सिंधु है वात्सल्य दिवाकर।
हम धन्य धन्य आज उनको अर्घ चढ़ाकर॥
जिनधर्म का डंका बजाना जिनका है धरम।
भक्ति से भक्त बोलो वंदे कुं थुसागरम्॥

ॐ ह्रीं गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी (जोगीरासा छंद)

कनकनंदी की ज्ञान रश्मियाँ ज्ञान किरण फै लाये।
वैज्ञानिक आचार्य हमारे सबको धर्म सिखाये॥
साम्य भाव ही सुख स्वभाव है यही गुरु बतलाये।
कनक रजत की थाल सजाकर गुरु को अर्घ चढ़ाये॥

ॐ ह्रीं वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रज्ञायोगी आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी

(तर्ज-मेरे सर पे...)

हे प्रज्ञायोगी गुरुवर दो प्रज्ञा का वरदान।
गुरुवर गुप्तिनंदी को बारम्बार प्रणाम-2
अष्ट द्रव्य से सजी धजी ये सुन्दर थाल निराली है।
गुरुवर तुमको अर्घ चढ़ाकर मिल जाती खुशहाली है॥
हे कुं थु गुरु के नंदन, हे धर्मतीर्थ की शान।
गुरुवर गुप्तिनंदी को बारम्बार प्रणाम-2

ॐ ह्रीं प्रज्ञायोगी आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय अर्घ

(तर्ज- नसे घातियाँ...)

परमेष्ठियों को सदा मैं ध्याऊँ, माँ शारदे को शीश नवाऊँ।
अनेकांत मय ये धर्म है प्यारा, सब पापों से हो छुटकारा ॥1॥
पंचसुमेरु के अस्सी जिनालय, भव्यों के सुख के हैं आलय।
बावन जिन चैत्यालय प्यारे, नंदीश्वर हैं सब मनहारे ॥2॥
तीनलोक के कृत्रिमाकृत्रिम, चैत्यालय में हैं जिनबिम्ब।
उनको नित प्रति अर्घ चढ़ाऊँ, भाव वंदना से सुख पाऊँ ॥3॥
सम्मदगढ़ गिरनार गिरी को, चम्पापुरी और पावापुरी को।
सोनागिर मथुरा चौरासी, बाहुबली गोम्मटगिरी वासी ॥4॥
आदि सभी तीरथ को ध्याऊँ, उनको नितप्रति अर्घ चढ़ाऊँ।
सीमंधर आदि जिन स्वामी, पूजा करूँ मैं हे जगनामी ॥5॥

दोहा : अष्टद्रव्य का थाल ले, अर्घ चढ़ाऊँ आज।
इहभव-परभव सफल हो, सिद्ध होय सब काज ॥

ॐ ह्रीं द्रव्य सहित भावपूजा भाववंदना त्रिकाल पूजा त्रिकाल वंदना करे करावै भावना भावै
श्री अरहंतसिद्ध आचार्य उपाध्यायसर्वसाधु पंच परमेष्ठिभ्यो नमः। प्रथमानुयोग करणानुयोग
चरणानुयोग द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। उत्तमक्षमादि दशलाक्षणिकधर्मभ्यो नमः। दर्शनविशुद्धयादि
षोडशकारणेभ्यो नमः। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र्येभ्यो नमः। विदेह क्षेत्रस्थ विंशति तीर्थकरेभ्यो
नमः। जल, थल, आकाश, गुफा, पहाड़, सरोवर, नगर-नगरी, ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक,
अधोलोक स्थित कृत्रिम-अकृत्रिम जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः। पाँच भरत पाँच
ऐरावत संबंधी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनराजेभ्यो नमः। नंदीश्वर द्वीप संबंधी
बावन जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। पंचमेरु संबंधी अस्सी जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। सम्मदशिखर,
कैलाशगिरी, चंपापुर, पावापुर, गिरनार, सोनागिर, मथुरा, गजपंथा, मांगीतुंगी, तपोभूमि
आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः। जैनबद्री, मूढबद्री, देवगढ़, चंदेरी, पपौरा, हस्तिनापुर, अयोध्या,
कुंथुगिरी, पुष्पगिरी, अंजनगिरी, नवग्रह धर्मतीर्थ वरूर, राजगृही, तारंगा, चमत्कार, महावीरजी,
पदमपुरा, तिजारा, अहिच्छेत्र, कचनेर, जटवाड़ा, पैठण, गोम्मटेश्वर, चंवलेश्वर, बिजौलिया,
चांदखेड़ी, पाटन, कुण्डलपुर, अणिन्दा वृषभदेव आदि अतिशय क्षेत्रेभ्यो नमः। श्री चारण
ऋद्धिधारी सप्त परमर्षिभ्यो नमः। भूत-भविष्यत-वर्तमान काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो
नमः।

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवंतं कृपावंतं श्री वृषभादि महावीरपर्यंतं चतुर्विंशति तीर्थकर परमदेवं
आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे भारत देशे..... प्रान्ते-नगरे.....
मासानांमासे.....मासे..... पक्षे..... तिथौ..... वासरे मुनि आर्यिकाणां श्रावक
श्राविकाणां, क्षुल्लक, क्षुल्लिकानां, सकल कर्मक्षयार्थ (जलधारा) जलादि महार्घ
निर्वपामीति स्वाहा।

(27 श्वासोच्छ्वास में 9 बार णमोकार मंत्र पढ़ें।)

शांतिपाठ (हिन्दी)

चौपाई

(शांतिपाठ बोलते समय पुष्पाञ्जलि क्षेपण करते रहें)

शांतिनाथ हैं जगहितकारी, शान्ति प्रदाता मंगलकारी।
सौम्य शांत प्रतिमा जो लखता, भवसागर से वह नर तिरता॥1॥
शरण तुम्हारी जो भी आता, मंगलमय शिवपद पा जाता।
पूजा प्रतिदिन भाव से करता, वह नर कभी न दुःख में पड़ता॥2॥

(यह श्लोक बोलते समय शांतिधारा करें)

शांतिधारा तुम्हें चढ़ाऊँ, प्रभु सम शांति मैं पा जाऊँ।
जग जीवों को शांति कर दो, धर्म सुधारस सब में भर दो॥3॥
दुःखी दरिद्री रहे न कोई, सबकी मति धर्ममय होई।
देव गुरु की शरणा पायें, भव दुःखों से न घबरायें॥4॥
राजा-प्रजा सभी नर-नारी, भक्ति करते सभी तुम्हारी।
भक्त से वे भगवान हैं बनते, मुक्ति रमा पा सुख में रमते॥5॥

विसर्जन पाठ

(दोहा)

प्रमादवश मैंने प्रभो! की पूजा में चूक।
अज्ञानी हूँ नाथ मैं क्षमा करो शिव भूप॥1॥
भक्ति भाव में मन लगा पाऊँ तुम सम रूप।
चरण शरण पा आपकी काटूँ कर्म अनूप॥2॥

तीन काल त्रैलोक्य में कोई न सच्चा देव ।

जगत भ्रमण अब तक किया पूजें देव-कुदेव ॥३॥

सत्य लगन हुई आपसे मिट गई मन की प्यास ।

सम्यग्दर्शन निधि मिले छूटे भव की त्रास ॥४॥

श्री जिन पूजन यज्ञ में आये जो-जो देव ।

धर्मप्रेम रख जिन भुवन, आयें नित्य सदैव ॥

ॐ आं क्रौं ह्रीं अस्मिन् नित्य पूजाभिषेक विधाने आगच्छत सर्वे देवाः स्वस्थाने
गच्छतः-ॐ जः-ॐ स्वाहा । इत्याशीर्वादः

(यह दोहा बोलते हुए आशिका ग्रहण करें)

दोहा : भगवंतों की आशिका, धारण करता शीश ।

भव बंधन मेरे कटें, शरण पाऊँ जगदीश ॥
